इस उपन्यास के लेखक श्री मुहम्मद बशीर का मलयालम भाषा के साहित्यकारों में विशिष्ट स्थान है। मलयालम भाषा में उनकी 'जन्म दिनम्', 'मुच्चीट्टु कलि', 'विशप्प', 'स्थलन्ते दियन', 'पातुम्मा युटे आट' आदि कृतियाँ अत्यन्त प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी हैं। 'दादा का हाथी' उनके 'एनरुप्पप्पेक्कोरानेन्तुनु' नामक लघु उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है।

श्री बशीर शीश-महल निवासी कलाकार नहीं हैं। वे तो आम जनता में रहे हैं। यही कारण है कि उनकी रचनाओं में जन साधारण के सुख-दुःख और उनके जीवन की विषमताओं का ऐसा मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है कि उसे पढ़ने पर यह प्रतिभासित होता है कि वे उनकी आशाओं-आकांक्षाओं के भागीदार रहे हैं। उनकी कहानियों में भी इसी का स्पष्ट प्रतिबिम्ब है।

प्रस्तुत उपन्यास केरल के सामन्ती मुस्लिम समुदाय के जीवन पर आधारित है। इसमें लेखक ने आभिजात्य मनोवृत्ति की निराधार तथा हास्यास्पद मान्यताओं से घिरे हुए एक ऐसे धनी मुस्लिम-परिवार का चित्रण किया है, जो परिस्थितिवश निर्धन हो जाता है। इस कहानी के माध्यम से बशीर ने हमारे सामाजिक जीवन के सभी तारों को मानो एक साथ झंकृत कर दिया है।

●

मुहम्मद बशीर

दादा का हाथी

अकादेमी के अन्य हिन्दी प्रकाशन

(मूल भाषाओं के नाम कोष्ठक में अंकित हैं)

१. भारतीय कविता : १९५३	(भारत की १४ भाषाओं की कविताओं का लिप्यंतर और अनुवाद)	५.००
२. केरल सिंह (**मलयालम**)	क. मा. पणिक्कर	३.००
३. भगवान बुद्ध (**मराठी**)	धर्मानन्द कोसम्बी	५.००
४. कांदीद् (**फ्रेंच**)	वाल्तेयर	२.००
५. दो सेर धान (**मलयालम**)	तकषी शिवशंकर पिल्लै	२.००
६. मिट्टी का पुतला (**उड़िया**)	कालिन्दीचरण पाणिग्राही	२.००
७. आरण्यक (**बंगला**)	विभूतिभूषण वंद्योपाध्याय	४.००
८. गेंजी की कहानी (**जापानी**)	मुरासाकी शिकाबू	४.५०
९. आरोग्य निकेतन (**बंगला**)	ताराशंकर वंद्योपाध्याय	६.००
१०. अमृत सन्तान (**उड़िया**)	गोपीनाथ महान्ती	१२.००
११ आदमखोर (**पंजाबी**)	नानकसिंह	५.००
१२. वैदिक संस्कृति का विकास (**मराठी**)	लक्ष्मण शास्त्री जोशी	५.५०
१३ क्या यही सभ्यता है ? (**बंगला**)	माइकेल मधुसूदन दत्त	१.५०
१४ नारायण राव (**तेलुगु**)	अडिवि बापिराजू	६.००
१५. आज का भारतीय साहित्य	(भारत की १६ भाषाओं के साहित्य का परिचय)	७.००
१६. जीवी (**गुजराती**)	पन्नालाल पटेल	४.५०
१७. भग्नमूर्ति (**मराठी**)	अनिल	१.००
१८ एकोत्तरशती (**बंगला**)	रवीन्द्रनाथ ठाकुर	८.००
१९. चिलिका (**उड़िया**)	राधानाथ राय	१.५०
२०. मिरातुल अरुस (**उर्दू**)	नज़ीर अहमद	५.००
२१. छै बीघा ज़मीन (**उड़िया**)	फकीर मोहन सेनापति	३.००
२२ मीरी बिटिया (**असमिया**)	रजनीकांत बरदलै	२.००
२३. मछुआरे (**मलयालम**)	तकषी शिवशंकर पिल्लै	३.५०
२४. आन्ध्र का सामाजिक इतिहास (**तेलुगु**)	सुरवरम् प्रताप रेड्डी	६.००
२५. वल्लत्तोल की कविताएँ (**मलयालम**)	वल्लत्तोल	२.५०
२६. गुबारे-ख़ातिर (**उर्दू**)	मौलाना अबुल कलाम आज़ाद	६.००
२७. परशुराम की कहानियाँ (**बंगला**)	राजशेखर बोस	३.००
२८. शान्तला (**कन्नड़**)	के. वी. अय्यर	७.००

दादा का हाथी

(मलयालम भाषा का लघु उपन्यास)

मूल लेखक

मुहम्मद- बशीर

अनुवादक

के. रवि वर्मा

साहित्य अकादेमी की ओर से

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि., *नई दिल्ली*

Dada ka Haathi (Malayalam novel: Euruppappekko-ranentarnu) by Mohammed Basheer. Translated into Hindi by K. Ravi Verma. Sahitya Akademi, New Delhi (1960) Price Rs. 2.00.

साहित्य अकादेमी नई दिल्ली
की ओर से
पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली
द्वारा प्रकाशित

©साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली

प्रथम संस्करण, १९६०
द्वितीय संस्करण, १९६३

मूल्य : २ रुपये

मुद्रक :
न्यू एज प्रिंटिंग प्रेस,
रानी झांसी रोड, नई दिल्ली

क्रम

१ : यही खाले इकबाल है ७

२ : कमबख्त इबलीस ! १५

३ : कहां गये वे घमंडी राजे-रजवाड़े २३

४ : दो पुरानी खड़ाऊँ ३१

५ : तूफान चला, पत्ता नहीं झड़ा ४१

६ : एक गोरैया का रोना ४९

७ : बुद्धू कहीं की ! ६०

८ : झूठी गवाही नहीं दूंगी ७३

९ : मेरे दिल में दर्द है ८८

१० : ख्वाबों का जमाना ९९

११ : नई पीढ़ी बोल रही है १०४

१

यही ख़ाले इक़बाल है

जैसे हजारों साल पुरानी घटना हो। क्योंकि बचपन कब का गुज़र चुका था और अतीत की बात बन चुका था। तब से जाने क्या-क्या उसके ऊपर से बीत गया था। वह सब जरा हल्के मन से, जैसे दिल बहलाव के लिए ही, कुंञुपात्तुम्मा[1] याद कर सकती थी। और फिर गुज़री बातें याद करके हँसना रोने से तो बेहतर है ही।

कुंञुपात्तुम्मा ने किसी के दिल को कभी दुखाया न था। यहाँ तक कि एक चींटी पर भी उसने हाथ नहीं उठाया था। रबुल-आलमीन ख़ुदा के ख़लक में किसी से उसने नफ़रत नहीं की। वह बचपन से ही सब प्राणियों से मुहब्बत करती थी। सबसे पहले उसने जिससे मुहब्बत की थी वह एक हाथी था। उस हाथी को उसने कभी

---

१ पात्तुम्मा—फ़ातिमा का केरलीय रूप। प्यार से 'कुंञ' जोड़कर पुकारते हैं।

देखा न था। फिर भी उससे प्यार किया। उस हाथी के बारे में उसकी जानकारी यों हुई :

तब की बात है जब उसकी उम्र सात साल की थी, हो सकता है आठ साल की रही हो। पर इससे ज्यादा नहीं। उन दिनों उस पर एक पाबंदी लगाई गई थी। बाप्पा (बाप) की तरफ से नहीं, उम्मा (माँ) की तरफ से। पाबन्दी यह थी कि वह पास-पड़ोस के छोकरों से, चाहे वे मुसलमान ही क्यों न हों, मेल-जोल न बढ़ाए। वह क्यों नहीं करना चाहिए, इसका भी एक कारण था, जिसे सारा संसार जनता है।

उम्मा ने कह सुनाया : "मेरी प्यारी कुंञुपात्तुम्मा ! तू आना मक्कार (आना=हाथी, आनामक्कार=हाथी वाला मक्कार) की लाडली बेटी की लाडली बिटिया है। तेरे उप्पुप्पा (दादा) थे न, उनके एक हाथी था, एक बड़ा-सा मस्त हाथी।"

उस दिन से रोज सौ बार वह रटा करती थी : "मेरे दुलारे हाथी !" उसके साथ तरह-तरह के खेल खेलकर वह बड़ी हुई थी। यानी उस हाथी की याद करती हुई वह अपने पक्के घर के आँगन में खेला करती थी। गले में, कानों में, हाथ-पैरों में खालिस सोने के गहने, कमर पर मलमली कपड़ा, बदन पर रेशमी कुरता, और सिर पर जरीदार 'तट्टम'[1]।

वह गोरी-चिट्टी तो थी, मगर उसके बदन में एक काला धब्बा था, जिसे देखकर उसे दुःख होता था। उसके गाल पर एक छोटा-सा तिल था।

यह खाले इक़बाल था। इसका पता उसे तभी लगा जब वह अपनी उम्र के चौदहवें साल में कदम रख रही थी और उसके निकाह की बातचीत काफी सरगर्मी के साथ चल रही थी। पता नहीं

१. सिर पर ओढ़ने का कपड़ा।

दूल्हा कौन है। कोई भी हो, इससे उसका मतलब ?

"और तब मैं पान खाऊँगी।" कुंञुपात्तुम्मा ने अपने-आपसे कहा। कुँआरी मुसलमान लड़कियों के लिए पान खाना मना है। कुंञुपात्तुम्मा को खुद मालूम नहीं कि अल्लाह ताला और नबी ने इसके बारे में कुछ फ़रमाया भी है या नहीं। मगर पान खाने का दस्तूर नहीं, इसलिए मना है। पराये मर्दों के सामने मुसलमान लड़कियों का जाना भी मना है। छुटपन में कुंञुपात्तुम्मा एकाध बार गई थी— नहीं, सामने तो नहीं गई, आड़ से उनको देखा था। मगर उनमें से किसी का चेहरा अब उसे याद नहीं। हाँ, कुछ औरतों का चेहरा अलबत्ता उसे अभी तक याद है।

उन औरतों के बारे में कुंञुपात्तुम्मा को इतना ही कहना था कि वे सब काफ़िर थीं। दुनिया में दो ही तबके हैं — मुसलमान और काफ़िर। चाहे मर्द हो, चाहे औरत, सभी काफ़िर मौत के बाद जहन्तुम में चले जायँगे। वे सब गुमराह हैं। मुसलमान उनकी नकल करेंगे तो गुनहगार माने जायँगे और दोज़ख में ठूँस दिये जायँगे। कुंञुपात्तुम्मा ने जिन काफ़िर औरतों को देखा था उनमें ज्यादातर उस्तानियाँ[1] थीं। बाप्पा उसे सजा-धजाकर नदी में स्नान करने ले जाता था। उस वक्त उन्हें अक्सर उसने देखा है। और शहरों से हवा-बदली के लिए आने वाले अमीरों की लड़कियों को भी उसने देखा है। उनमें किसी के पास उतने गहने नहीं, जितने कुंञुपात्तुम्मा के पास हैं। वे उसकी ओर डाहभरी नज़रों से देखतीं, उसकी ओर इशारा करके पूछतीं : "कौन है यह लड़की ?"

बड़े अदब से कोई जवाब देता : "वट्टनट्टिमा काका[2] की बिटिया कुंञुपात्तुम्मा — आनामक्कार की पोती।"

१. अध्यापिकाएं।

२. काका—एक सम्मानसूचक शब्द।

सुनकर कुछ लोग कहते : "अच्छा, हमारी कुंजुताच्चुम्मा मौसी की बेटी है।"

स्कूल की उस्तानियाँ उसे घेरकर खड़ी हो जातीं। कहतीं : "जरा हँसो तो कुंजुपात्तुम्मा !"

वे उस्तानियाँ कुंजुपात्तुम्मा को खूब पसन्द आईं। काफ़िर हैं तो क्या हुआ, कैसी खुशबू आती है उन लोगों के तन से ! साड़ियाँ पहना करती हैं सब। 'ब्लाउज़' नाम का कुर्ता है सबके बदन पर। उसके नीचे 'बॉडीस' नाम का एक मुलायम कुर्ता। और फिर वेणी में फूल पहन लेती हैं। उनमें कोई कुंजुपात्तुम्मा के बालों में फूल खोंस देती, तो कोई उसके चेहरे की ख़ाल उँगुलियों से चुटकी भरकर निकाल लेने का बहाना करती। मगर इन बातों में उसे कोई ख़ास मज़ा न आया। वह चाहती यही थी कि उन औरतों की तरह वह भी साड़ी, ब्लाउज़ और चुस्त कुर्ता पहन ले। बाप्पा से जब उसने अपनी यह ख्वाहिश ज़ाहिर की तो वे औरतें हँस पड़ीं। कहा : "कुंजुपात्तुम्मा ! पहले तुम बड़ी हो जाओ, तब यह सब पहन लेना !"

'बड़ी हो जाना चाहिए।' उसने अब यही चाहा। 'अब जल्दी बड़ी हो जाना चाहिए।'

घर जाकर उसने उम्मा से पूछा : "उम्मा, मैं कब बड़ी हो जाऊँगी ?"

उम्मा ने जब पूछा कि आख़िर मामला क्या है, तो कुंजुपात्तुम्मा ने सारा किस्सा कह सुनाया।

उम्मा ने उसे धमकी देते हुए कहा : "बिटिया मेरी, हमारे लिए यह सब हराम है। काफ़िरों का यह लिबास ! काफ़िरों की हमें मुख़ालिफ़त करनी चाहिए।"

"उम्मा ठीक ही कह रही है बेटी," बाप्पा ने ताईद की, 'हमारे लिए यह कुफ़ है।"

अगर बाप्पा कहे कुफ़ है तो फिर कुफ़ है ही। 'शरअ' के मुताबिक ज़िन्दगी बसर करने वाला असली मोमिन है बाप्पा ! इज्ज़त के साथ उसका नाम लिया जाता है। गाँव का मुखिया है, और है मस्ज़िद का मुख़्तार — गांव का सबसे बड़ा बुज़ुर्ग। सिर हमेशा सफाचट रखता, दाढ़ी-मूँछ का बाक़ायदा ख़त बनाता। मूँछों के दोनों छोर मरोड़कर सींगनुमा कर देता। महज़ लुंगी पहनता। कंधे पर लम्बा-सा महीन ज़रीदार अंगोछा लापरवाही के साथ लटका लेता। कभी-कभी अंगोछे का पल्ला जमीन पर लोटने लग जाता। पीछ चलने वाले अदब से उसे उठा लेते, और बाप्पा को इसकी खबर तक न होती। शान से वह आगे बढ़ता। उसके नमाज़ पढ़ने का यह हाल कि एक जून भी छुट्टी नहीं लेता। रमज़ान के महीने में तीसों दिन रोज़ा रखता, ज़कात देता। बाप्पा की हज़ करने की मंशा थी। मगर वह कहता — "उस सब के बारे में पीछे सोचा जायगा, कुंजुपात्तुम्मा की शादी के बाद।"

शादी की चर्चा जोरों पर चल रही थी। घर पर हमेशा लोगों का मेला-सा लगा रहता, पान के बीड़े बाँटे जाते। बाप्पा पान का शौकीन नहीं।

मगर उम्मा पान की इतनी शौकीन थी कि पान के चुने हुए एक सौ मुलायम पत्ते अकेली नोश फ़रमाती। पान खाना और गप्पें उड़ाना, बस ये ही दो काम उम्मा करती। पानदान के पास सभी गहनों से लदी, ज़री का कुर्ता, 'तट्टम' और 'किंटन'[१] पहनकर वह मलमल-सी मुलायम चटाई पर बैठी रहती। नंगी जमीन पर कदम कभी न रखती। खड़ाऊँ पहनकर घूमती। उप्पुप्पा के हाथी के दाँत से उम्मा की खड़ाऊँ की खूँटी बनी है। खड़ाऊँ दिन-रात पास ही रहतीं।

---

१ लुंगी

पान खाने और गप्पें सुनने के लिए काफ़ी औरतें जमा हो जातीं। उम्मा बात शुरू कर देती। मजमूँ भी ज्यादा नहीं। या तो कुंजुपात्तुम्मा या बाप्पा की सात बहनें। अक्सर कुंजुपात्तुम्मा के गाल का तिल अहम मजमूँ बन जाता।

"इसे कहते हैं खाले इक़बाल।" उम्मा कहती, "ऐसी नियामत है कि यह ऐसे-वैसे किसी को नहीं मिलता। आनामक्कार की प्यारी बेटी की दुलारी बेटी है न, इसलिए।" उम्मा बातचीत के सिलसिले में आगे कहती, "पाँच बच्चों को जनम दिया था, मगर अल्लाह, मुत्तुनबी (मुहम्मद नबी) और महरूमों ने एक ही को जिन्दा छोड़ा।" फिर कुंजुपात्तुम्मा के गहनों पर हाथ फेरती हुई पूछती, "अब तुम्हीं कहो, इसकी देख-भाल ढंग से करनी है कि नहीं?" आगे जरा गुस्से के साथ बोलती, "इसके बाप्पा के रिस्तेदार शरीक भले ही न हों, शादी इसकी होकर रहेगी।"

इस तरह तकरीर खत्म करके उम्मा सामने बैठी हुई किसी औरत से फरमाइश करती, "अब तू भी कुछ सुना री!"

फिर आई हुई औरतों के बोलने की बारी आती। वे भी कुछ इधर-उधर की बातें सुनातीं। एक बार उनमें से किसी ने जो कुछ सुनाया उसे सुनकर कुंजुपात्तुम्मा हैरान रह गई। उसे पहले तो दुःख हुआ, फिर गुस्सा आया।

कुंजुपात्तुम्मा ने जो अजीबो-ग़रीब खबर सुनी वह यों थी—

पड़ोस में और फिर उस गाँव के करीब सभी घरों में चार-पाँच साल की उम्र वाले लड़के काफ़ी हैं। एक नई पीढ़ी की आमद हो रही थी। इसमें कुंजुपात्तुम्मा को कोई शिकायत नहीं। मगर उन कलमुँहों का नाम जो है, उसे सुनकर जैसे उसके बदन में आग-सी लग जाती। कमबख्त कुली, मछुए, बिसाती – गर्ज कि जिस किसी मुसलमान के घर पर जाइए, वहाँ एक कुंजुपात्तुम्मा मिलेगी, एक

अटिमा दीखेगा, एक कुंजुताच्चुम्मा और एक मक्कार नज़र आयगा।

या रब! अब क्या होगा! अगर शर्म व हया की बूँद तक उनमें होती।...अगर होती तो अपने बच्चों का और कोई नाम न रख लेते? लेकिन कुंजुपात्तुम्मा अभी इतनी नादान थी कि दुनिया के एक राज़ से वाकिफ़ होने से रह गई थी। वह यह कि जो दौलत के मालिक हैं और जो नाम व शोहरत पाये हुए हैं, उनका नाम उन दोनों चीजों से महरूम लोग इस्तैमाल करते हैं। और यही ज़माने का दस्तूर है। अभी यह क़ानून नहीं बना है कि अमीरों और नामी-गिरामी लोगों का नाम ग़रीब अपने बच्चों का न रखें।

मगर कुंजुपात्तुम्मा को यह बिलकुल ठीक न जँचा, क्योंकि संसार में अगर कोई कुंजुपात्तुम्मा थी भी, तो वह खुद थी। उसके बाप्पा को छोड़कर कोई बहन अटिमा नहीं। उसकी उम्मा ही अकेली कुंजुताच्चुम्मा है। उसके उप्पुप्पा ही अकेले आनामक्कार हैं।

और जब मामला इतना संगीन था तो भला वह उन लोगों को माफ़ कैसे कर सकती थी? उसने दूसरी औरतों के सामने ही सारी बातें उम्मा को सुनाईं और रंज व गुस्से के साथ उम्मा से पूछा—"वे लोग हमारा नाम क्यों रख लेते हैं, उम्मा?"

"सुना तुम लोगों ने! परसों इसकी शादी होने वाली है और अब पूछ रही है—"

"लो, देखो" कहकर उम्मा ने उसके गाल के तिल पर हाथ रखा। तब कहीं जाकर बात उसकी समझ में आई। गाँव की चार-पाँच साल की उम्र वाली किसी लड़की के गाल पर तिल हो, यह अब तक उसके सुनने में नहीं आया। उम्मा ने उपस्थित औरतों से भी पूछा तो उन लोगों ने भी 'नाहीं' कर दी।

"क्यों नहीं?" उम्मा ने पूछा, "अच्छा बता, उसका रंग कैसा होता है?"

काले तिल का रंग काला। इसके सिवा और क्या हो सकता है ? इसलिए कुंञ्ञुपात्तुम्मा ने कहा : "काला !"

उम्मा ने पूछा : "तेरे उप्पुप्पा के हाथी का रंग कैसा था ?"

कुंञ्ञुपात्तुम्मा ने सोचा—अक्सर हाथी का रंग काला ही होता है। उसने कहा : "काला।"

उम्मा ने पूछा : "और तेरा रंग ?"

कुंञ्ञुपात्तुम्मा गोरी थी ही। उसने कहा : "गोरा !"

उम्मा ने पूछा : " तू तो गोरी है। तेरे गोरे गाल पर काला तिल किस प्रकार हुआ ?"

अब कुंञ्ञुपात्तुम्मा की आंखों के सामने से पर्दा-सा उठ गया। सारी बात उसकी समझ में आ गई। उसे अपने काले तिल पर फ़ख्र हुआ। उसने कहा : "मेरे दादा के एक हाथी था !"

उम्मा ने खडाऊँ छूते हुए कहा : "हाँ, बड़े-बड़े दो दाँतों वाला बड़ा-सा मस्त हाथी !"

२

कमबख्त इबलीस

कुंञ्ञुपात्तुम्मा की शादी की तैयारी जब पूरे जोर पर थी कि उसने दो खबरें सुनीं—

दादा का जो हाथी था उसने छै आदमियों का सफाया कर दिया। सुनकर उसे दुःख हुआ। हाथी पर बड़ा गुस्सा आया। कहा : "मनहूस हाथी !"

लेकिन उसका गुस्सा जल्द ही काफ़ूर हो गया। जिन छै महावतों का हाथी ने खून किया था, वे सब काफ़िर थे। उनमें से एक भी मुसलमान न था। कुंञ्ञुपात्तुम्मा को खुद मालूम न था कि उस हाथी का कोई मुसलमान महावत भी था या नहीं।

उम्मा ने कहा : "वह असली हाथी था।"

—कारण कि वह दादा के हाथ से गुड़ और केले खाता था।

उम्मा ने कहा : "तेरे बाप उस पर सवार होकर मेरे साथ निकाह करने आये थे।"

कुंञुपात्तुम्मा सोचने लगी—'जो लड़का मेरे साथ निकाह करने आयेगा...क्या वह भी हाथी पर आयगा।'

'उसका निकाह किसके साथ और क्यों हो रहा है, इसकी जानकारी उसे बिलकुल नहीं थी। उसकी शादी के तुरन्त बाद बप्पा मक्का जायगा हज करने। मक्का नाम के पाक़ शहर में मुहम्मद नबी ने जन्म लिया था। वहाँ काबा नाम की एक पाक़ मसजिद है, जो दुनिया की पहली मसजिद है। इतनी पुरानी कि पता नहीं कब बनी थी। इब्राहिम नबी ने उसकी मरम्मत कराई थी। कुंञुपात्तुम्मा के बाप्पा ने कोई मसजिद नहीं बनवाई है। हज के बाद वापस आने पर वह 'हाजी वट्टनटिमा' या 'वट्टनटिमा हाजी' कहलायगा।'

कुंञुपात्तुम्मा ने पूछा—"उम्मा भी जायँगी क्या ?"

उम्मा ने पूछा—"कहाँ ?"

"हज करने।"

उम्मा ने कहा : "हाँ।"

"तो मुझे भी साथ ले जाना !"

उम्मा हँस पड़ी, बोली : "यह सब अपने शौहर से कहना।"

मारे शर्म के वह जमीन में गड़ गयी। कुछ कह नहीं सकी। उससे निकाह करने वाला कौन है ? जवान है या बूढ़ा ? गोरा है या काला ? यह सब वह बिलकुल नहीं जानती थी। कोई एक आने वाला है। बस, वह इतना ही जानती थी।

जो लड़की बनकर पैदा होती है, उसकी एक लड़के के साथ शादी होनी लाजिमी है। मुहम्मद नबी और उनके असहाबियों (चेलों) के ज़माने से ही यह रिवाज चल पड़ा है। उनके पैदा होने के पहले भी शायद यही दस्तूर रहा होगा। हज़ारों-लाखों साल पहले की बात है कि आदम नबी ने हौवा बीबी से निकाह किया। आदम नबी और हौवा बीबी के बाप्पा उम्मा न थे। इसलिए उनका

निकाह रबुल आलमीन ख़ुदा ने करा दिया। आदम नबी और हौवा बीबी ही मरहूम और जिन्दा सभी लोगों के सबसे पहले माँ-बाप थे। उनके पहले दुनिया में कोई आदमी न था। आदम नबी और हौवा बीबी कितने करोड़ साल पहले जिन्दा थे, इसका पता कुंञुपात्तुम्मा को नहीं था। आदम नबी के बाद और भी कितने ही नबी दुनिया में पैदा हुए...नोह, इब्राहिम, दाऊद, ईसा, मूसा, मुहम्मद...। मुहम्मद आखिरी नबी हैं। अब कोई नबी पैदा न होगा, क्योंकि मुहम्मद नबी के बाद कुछ करने के लिए अब बाकी ही न रहा।

मुहम्मद नबी की बड़ी बेटी का नाम फ़ातिमा था। लोग उसे 'पात्तुम्मा' कहकर भी पुकारते थे। मुहम्मद नबी ने फ़ातिमा का खलीफ़ा अली से निकाह कर दिया था।

अली बड़े बहादुर थे। उनके पास एक निहायत चमकती-भड़कती तलवार थी, जो दुलफ़क़ार कहलती थी। हश्र के दिन रबुल आलमीन ख़ुदा के हुक्म से अली ने वह तलवार समुंदर में फेंक दी। उस तलवार ने सभी मछलियों का गला काट डाला। इसीलिए तो हरेक मछली की गर्दन के दोनों बाजू कटे दिखाई देते हैं। और उस दिन से मछली इस्लाम के लिए हलाल हो गई।

कुंञुपात्तुम्मा सोचने लगी—'जो उससे शादी करने आयगा, क्या वह भी बड़ा बहादुर होगा ? कौन जाने ? किससे पूछे ? एक ही चारा है—जो हुक्म दिया जाय, बजा लाय। जो कुछ दिया जाय, कबूल किया जाय। यही एक मुसलमान औरत का फ़र्ज है और कुंञुपात्तुम्मा ने तो यह सब अच्छी तरह समझ भी रखा है।' इसके बारे में रबुल-आलमीन ख़ुदा और रसूल मुहम्मद नबी ने क्या कहा है ? कुंञुपात्तुम्मा ने कुरान पढ़ी है, हालाँकि उसे उसके एक भी लफ़्ज के मानी मालूम नहीं। उसके बाप्पा और उसकी उम्मा ने भी पढ़ी है, और उसके दादा आनामक्कार ने भी। लेकिन उनमें

किसी को भी मालूम नहीं कि कुरान में क्या बताया गया है। अगर दुनिया के सारे पेड़ों को कलम बनाया जाय और समुंदरों को स्याही, और तब कुरान के माने लिखने बैठें तो एक बाब का अर्थ लिखकर खत्म करने के पहले ही तमाम पेड़ घिस जायँ और सारा समुंदर सूख जाय। कुरान बड़ी ही पाक़ किताब है। उसमें सब-कुछ है। उसे किसी ने लिखा नहीं। रबुल आलमीन खुदा ने जिबरील नाम के मलक के ज़रिए उसे मुहम्मद नबी के ऊपर से उतार दिया था। नबी को लिखना-पढ़ना आता न था। तो भी कुरान नबी की ज़बान में लिखी गई है। नबी की ज़बान है अरबी। कुंजुपात्तुम्मा ने सुन रखा था कि अरब नाम का एक मुल्क है। वहाँ मक्का और मदीना दो तीर्थ-स्थान हैं। मक्का में मुहम्मद नबी पैदा हुए थे और मदीना में नबी का इन्तक़ाल हो गया था।

'बाप्पा और उम्मा हज को जायँगे तो मदीने भी जायँगे। क्या मेरे शौहर मुझे भी उनके साथ हज जाने की इजाजत देंगे ?' कुंजुपात्तुम्मा ने अपने-आपसे पूछा। इसका खयाल दिन-रात उसके मन में आता रहा। अचानक एक दिन उसने देखा कि बाप्पा बड़ा खफ़ा हो गया है। उसकी आँखें लाल-लाल हो गईं और वह हँस पड़ा।

"बड़े आये हैं !" बाप्पा कह रहा था, "बड़े आये हैं वट्टनटिमा से चालबाज़ी करने वाले ! अल्लाह मुहम्मद नबी और उम्मतों की मेहरबानी से कमबख्तों को मैं सिखाकर ही छोड़ूँगा।"

'चालबाज़ी कैसी,' यह उस वक्त कुंजुपात्तुम्मा की समझ में न आया। बाप्पा के नाम एक मुक़द्दमा चल रहा था, मसजिद की मुख्तारी के सम्बंध में। कहते हैं कि बाप्पा को मसजिद की मुख्तारी करने का हक़ नहीं।

तो फिर हक़दार है कौन ? गाँव के मुखिया ने ही हमेशा मजसिद के कामों की निगरानी की है और करता आ रहा है।

मुखिया बनने के लिए यह लाज़िमी है कि पास में काफ़ी दौलत हो। उस गाँव का सबसे बड़ा दौलतमंद आदमी कुंजुपात्तुम्मा का बाप्पा ही था। एक से ज़्यादा अमीर जिस गाँव में हों, वहाँ मसजिद की मुख्तारी के लिए हमेशा झगड़ा चलता ही है। हाथापाई होती है। कभी-कभी बात खून-खराबी की हद तक पहुँच जाती है। फिर अदालत में मुक़द्दमा दायर किया जाता है। बरसों तक यह सिलसिला जारी रहता है। जहाँ-जहाँ मसजिदें होती हैं, मुक़द्दमे भी होते हैं। कुंजुपात्तुम्मा को खूब अच्छी तरह मालूम है कि यह सब कमबख्त इबलीस के कारनामे हैं। अगर इबलीस न हो तो दुनिया में कोई वारदात न हो।

कमबख्त इबलीस के बारे में कुंजुपात्तुम्मा ने सबसे पहले मसजिद में सुना था। उस दिन वह मसजिद में नमाज पढ़ने के लिए तो नहीं गई थी। मुसलमान औरतें मर्दों के साथ मसजिद में जाकर नमाज नहीं पढ़ सकतीं। उस दिन वह मसजिद गई थी, 'वअज़' नाम की तक़रीर सुनने, जो रात के वक्त दी जाती है। एक मुसलियार (वाइज़) वअज़ दे रहा था। मसजिद के सामने एक शामियाना बनाया गया था, औरतों को बैठाने के लिए। वहाँ से कुछ भी दिखाई न देता था। उस शामियाने में बैठकर कुंजुपात्तुम्मा ने कमबख्त इबलीस के बारे में सुना था। मुसलियार गला फाड़-फाड़कर तरन्नुम के साथ इबलीस की हरकतें हाज़रीनों को सुना रहा था। उस दिन उसने जो कुछ कहा, सब कुंजुपात्तुम्मा को खूब याद है।

कमबख्त इबलीस शुरू में अहम मलकों में से था। रबुल-आलमीन खुदा के दरबार में वह आराम से दिन गुज़ार रहा था कि इतने में एक घटना हुई :

धरती वग़ैरा की पैदाइश के पहले की बात है। सबसे पहले अल्लाह ने मुहम्मद नबी को पैदा किया। इसके बाद करोड़ों युग बीत गए। फिर धरती, सितारे, सूरज और चाँद को सिरजा। मुहम्मद

नबी के पसीने की तीन बूंदों से दूसरे जानदारों को पैदा किया। उनमें पहला आदमी बना आदम नबी।

आदम को सिरजने के बाद सब मलकों और जिनों को अल्लाह ने हुक्म दिया कि आदम के सामने सिर नवाओ; सबने हुक्म की तामील की, लेकिन उस अहम मलक ने इन्कार किया। क्योंकि मलकों को रचा था आग से और आदम आदमी के सिरजने में मिट्टी की मिलावट ज्यादा थी।

खाकी के सामने नूरी का सिर नवाना कहाँ का इन्साफ़ है? यही उस आला मलक की दलील थी। कुछ भी हो, बे-अदबी के लिए रबुल-आलमीन खुदा ने उसे कड़ी सज़ा दी; वह बहिश्त से निकाल दिया गया।

वही कमबख्त इबलीस है।

कुंजुपात्तुम्मा इबलीस की बाबत और भी चन्द बातें जानती थी।

बदला चुकाने के इरादे से उसने दुनिया में आकर आदम नबी और हौवा बीबी को गुमराह करने की कोशिश की। और इसके बाद खल्क को, खासकर मुसलमानों को गुमराह करके काफ़िर बनाने और दोजख में ठूंस देने की तरकीबें ढूंढ़ निकालना ही उसका पेशा रह गया। वह तरह-तरह का भेस बदल कर घूमता है। सभी ज़बानें उसे आती हैं। कोई भी चाल वह चल सकता है। अपने गुट में भी कुछ लोग शामिल हों, बस इसीसे उसका मतलब है। इसकी भी कई वजहें हैं।

कुंजुपात्तुम्मा के बाप के मुँह से सुनी बात है—मुसलमानों के खास लिबास होते हैं। मर्द हो तो लुंगी का सिरा कमर में बाईं तरफ खोंसकर पहनता है। सिर सफाचट कर लेता है। खेत की मेंड़ की तरह खत बनानी होती है दाढ़ी की। औरत हो तो कान छेदकर

'अलिकत' (कर्णाभूषण) पहनना होता है। बदन पर कुर्ता और सिर पर कमाबा पहनना ज़रूरी है। वे बालों को ऊँछ तो सकती हैं, मगर माँग नहीं रख सकतीं।

एक दफ़ा एक मुसलमान जवान ने इस कानून को तोड़ा। उसने सिर के बाल बढ़ाये, हजामत कराई और बीच में माँग भी रखी।

बाप्पा ने ख़बर सुनी तो उस जवान को बुला लिया और 'ओस्सान' (हज्जाम) से उसका सिर मुँड़वा दिया। बाप्पा ने कहा: "जब तक वट्टनटिमा की रूह सलामत है, अल्लाह और मुत्तु नबी (मुहम्मद नबी) की दया व करम से दीने इस्लाम की ज़िल्लत नहीं होने दूंगा।"

बाल बढ़ाने वाले और बनाने वाले चूँकि इबलीस के गुट के होते हैं, इसलिए उनसे होशियार रहना पड़ता है। वे कहीं सिर पर सवार न हो जायँ; इसीसे सिर पर टोपी पहनी जाती है। टोपी न हो तो सिर पर कपड़ा बाँधना काफी है।

लेकिन बाप्पा न तो टोपी पहनता है और न सिर पर कपड़ा बाँधता है। नमाज पढ़ते वक्त तो अलबत्ता वह कपड़े से सिर ढक लेता है। तो क्या बाक़ी वक्त इबलीस बाप्पा के सिर पर सवार रहता है? नहीं, ऐसे शक-सुबहों की कोई गुंजाइश नहीं।

इबलीस को यह हिम्मत व हियाव कहाँ कि वह अटिमा के पास तक फटक जाय।

तो भी कुंजुपात्तुम्मा हमेशा कपड़े से सिर ढका करती है, उम्मा भी ढक लेती है। कुंजुपात्तुम्मा बाल ऊँछती, पर काफ़िरों की तरह माँग कभी न काढ़ती।

कमबख्त इबलीस के बारे में जो किस्सा कुंजुपात्तुम्मा के बाप्पा ने कह सुनाया था वह यों था—

सब-कुछ पैदा करने के बाद अल्लाह ने सभी जानदारों की

रूहों से पूछा : "तुम लोगों को किसने सिरजा ?"

सबने कहा : "हमारा कोई सिरजनहारा नहीं।"

अल्लाह ने सबको सज़ा दी। तरह-तरह की सजाएँ जुग-जुग तक देते रहे। फिर भी किसी ने क़बूल नहीं किया।

आख़िर रबुल-आलमीन ख़ुदा ने सबको भूख की सज़ा दी। इस तरह भूख पैदा हुई। भूख की सज़ा पाते ही सबने क़बूल किया : "अल्लाह हमारा सिरजनहारा है !"

उस दिन का वह 'क़बूलनामा' एक पत्थर के अन्दर महफ़ूज़ है। क़यामत के दिन जब रूहों से ज़िरह की जायगी तो सबूत के तौर पर वह पत्थर पेश होगा। उसी पत्थर का नाम है, 'हश्रुल असवद'। वह काला पत्थर मक्का के काबे में रखा गया है। हज जाने वाले उसे छूकर बोसा देते हैं। बाप्पा और उम्मा भी बोसा देंगे ही। कुंजुपात्तुम्मा भी कभी हज जा सकेगी और उस संगे-असवद को चूम सकेगी ? अगर कोई गड़बड़ी हो ही गई, जिसकी वजह से वह न जा सकी तो समझना कि वह कमबख़्त इबलीस की हरकत है। हर अच्छे फ़ेल में टाँग अड़ाना ही उसका धंधा है।

"या रबुल-आलमीन ! या ख़ुदा !" कुंजुपात्तुम्मा इल्तिज़ा करती—"कमबख़्त इबलीस के शरअ से हमें बचाना !"

३

कहाँ गये वे घमंडी राजे-रजवाड़े ?

कुंजुपात्तुम्मा बन-ठनकर बैठी थी। हाथ-पैर मेंहदी से लाल और आँखें सुरमे से कजरारी। एक किस्म की अजीबो-गरीब इन्तज़ार में उसके दिन कटते जा रहे थे।

इन्तज़ार किसका ?

शुरू-शुरू में शादी उसे दिल्लगी-सी लगती थी, क्योंकि एक बार शादी हो जाने पर फिर वह पान चबाकर ओठ सुर्ख बनाये रख सकेगी, घर की मालकिन बनकर दूसरों पर हुकूमत चलायगी, कानों में सोने की 'अलिकत' पहन लेगी और बाप्पा और उम्मा के साथ हज जायगी। मगर...इसके लिए...उससे निकाह करने के लिए आने वाला आदमी राजी होगा भी या नहीं, कौन जाने ?

लेकिन शादी के उम्मीदवारों में कोई भी आनामक्कार की लाड़ली बेटी के लायक़ साबित नहीं हुआ। किसी के पास दौलत काफ़ी नहीं, तो किसी का खानदान अच्छा नहीं।

इस तरह दिन टलते गए, कटते गए। कुंजुपात्तुम्मा जवानी की ओर बढ़ती जा रही थी कि इतने में उसके दिल में और एक चाह सिर उठाने लगी। किसकी चाह—यह साफ-साफ बताया न जा सकता था। मन में कुछ अजीब-सी बेताबी ! अपने से निकाह करने आने वाले लड़के को पहले से ही ज़रा एक बार देख ले। बस, देख भर लेना काफी है।

मगर यह चाह उसने किसी के सामने जाहिर नहीं की। जाहिर करे भी कैसे ? सुनने वाले क्या समझेंगे ? छि: छि: ! मुसलमान लड़कियों के लिए ऐसी बातें करना ज़ेबा नहीं देता। तो भी कुंजुपात्तुम्मा की वह ख्वाहिश दिन-दूनी रात-चौगुनी बढ़ती गई। मगर चुपचाप बैठकर ख्वाब देखने के सिवा वह कर ही क्या सकती थी ? घर पर चार-पांच नौकरानियाँ हैं। शोरो-गुल चौदहों घंटे जारी रहता है। माँ की खड़ाऊँ की 'क्टो-क्टो' की आवाज, सो अलग। बाप्पा हमेशा घर की चौपाल पर बैठकर ज़ोर से बातें करते। बहुत-से लोग इकट्ठे हो जाते। वे सब किसके बारे में बोलते होंगे !

जिसके बारे में वे बातचीत करते थे वह सब कुंजुपात्तुम्मा की समझ में नहीं आता था। अदालत, वकील-मुवक्किल, पता नहीं क्या-क्या ? जब कभी उसकी शादी का जिक्र आता तो उसके कान खड़े हो जाते। मगर वह लाचार थी। उसे डर था कि वह ज़रा-सी हिली या डुली तो सारी दुनिया उसे देख लेगी। इसमें वह शर्म महसूस करती थी। अगर वह साँस भी ले तो 'क्लों' की आवाज गूँज उठे। चलने लगे तो फिर जो शोर 'क्लों-च्लों-प्लों' का सुनाई देता उसके बारे में कुछ न कहना ही बेहतर है। पता नहीं इतने गहने आखिर क्यों। वैसे तो वह कुछ गहने उतारकर पेटी में रख सकती है। मगर कौन जाने दुलहिन की खोज में निकली औरतें कब आ धमकें।

जितनी औरतें आईं, सब गहनों से लदी हुई। सब इतनी चालाक-चतुर कि क्या कहें ! जाने कैसे-कैसे सवालात पूछे जाते हैं। शक-शुबहों के अंबार लगा देती हैं। कुछ-एक ने कुंजुपात्तुम्मा के होंठ खुलवाकर जाँच की थी कि सब दाँत सही-सलामत हैं कि नहीं, कीड़े तो नहीं लगे।

उसके सब दाँत ठीक निकले। हिसाब से भी ठीक और देखने में भी सुंदर।

और कुछ औरतें यह जानना चाहती थीं कि कुंजुपात्तुम्मा बुद्धू तो नहीं, होशियार तो है। इसके लिए वे तरह-तरह के सवाल करतीं।

"हमको किसने पैदा किया ?" एक ने पूछा।

कुंजुपात्तुम्मा ने कहा : "अल्लाह ने।"

"क़यामत की क्या निशानी है ?"

"मतलब है दुनिया के अन्त की, प्रलय की, क्या पहचान होती है ?"

"यह दुनिया एक दिन मिट जायगी ही। उसी दिन को क़यामत का दिन कहते हैं। लेकिन क़यामत आने से पहले अनहोनी बातें होने लगती हैं।"

कुंजुपात्तुम्मा उनका यों बयान करने लगती है—"निचले तबके के लोगों की तरक्की होगी और आला तबके के लोगों का ज़वाल। लोग झूठ बहुत बोलने लगेंगे। खुदा से भरोसा उठ जायगा। ईमान का पूछने वाला कोई न रहेगा। माँ-बाप के हुक्म की तामील न होगी। बड़ों की इज्ज़त नहीं की जायगी। बुजुर्गों की हँसी उड़ाई जायगी। औरतें अदब-कायदे और शरमो-हया से महरूम रह जायँगी। कोई किसी की कद्र नहीं करेगा। कोई किसी पर भरोसा न रखेगा। मुहब्बत की बू-बास तक न रहेगी। बदला चुकाने

की भूख बढ़ेगी। बेरहमी की हद हो जायगी। राजे-रजवाड़े और हुक्काम बड़े ज़ालिम निकलेंगे। दुनिया को अपने कब्जे में कर लेने का लालच बढ़ेगा। घमासान लड़ाइयाँ होती रहेंगी।...लेकिन तब भी दुनिया का अन्त न होगा। सिर्फ अल्लाह ही उसे मिटा सकेगा। क़यामत से बहुत साल पहले से ही 'भूल' नाम की एक खौफ़नाक बीमारी में आदमी के फँस जाने से नाकों-दम होगा।...और एक दिन...सूरज के निकलने के बाद ज्यों ही लोग अपने-अपने कामों पर जुट जाने की तैयारी में रहेंगे, अचानक एक तगड़ी आवाज़ सबके कानों में पड़ेगी।

सब हैरान-परेशान रह जायँगे कि 'बाप रे बाप! यह किसकी आवाज़ है?'

यह 'सूर' नाम की तुरही की आवाज़ होगी!

इसराफ़ील नाम का मलक यह तुरही बजाता है। इस बिगुल की नली बड़ी लम्बी होगी। उसमें उतने ही सूराख रहते हैं जितने कि इस संसार के बाशिन्दे होते हैं।...सूर सुनकर लोग भाग निकलेंगे और एक जगह पर जमा होकर आपस में पूछने लगेंगे—'यह आवाज़ कहाँ से आ रही है?'

बिगुल की आवाज़ बराबर बढ़ती जायगी, यहाँ तक कि वह बिजली की कड़क की तरह भयानक हो उठेगी। सभी प्राणी परेशान होकर भटकने लगेंगे। हौलनाक आवाज़ जारी रहेगी और लोग झुंड-के-झुंड बेदम धरती पर गिरने लगेंगे। धरती लरज उठेगी, धड़ाके के साथ फट जायगी। सब समुंदर घहराते-लहराते धरती पर चढ़ आयँगे। टीले और पहाड़ आपस में टकराकर तहस-नहस हो जायँगे। आँधी उठेगी। दुनिया से आग एकदम बुझ जायगी। आसमान चूर-चूर हो जायगा। सूरज और चाँद-सितारे ठंडे पड़ जायँगे, कोयले की तरह स्याह पड़ जायँगे। सब खत्म, कुछ भी बाकी न

रहेगा। बाकी रहेगा सिर्फ रबुल-आलमीन खुदा। तब अल्लाह फरमायगा: 'कहाँ गये वे घमंडी राजे-रजवाड़े, जो यह कहकर इतराते थे कि सब-कुछ मैं हूँ।'

इस तरह करोड़ों युग तक वह अकेला रहेगा। फिर नये सिरे से दुनिया का सृजन होगा। सूरज-चाँद बनेंगे। सब रूहों को फिर जिलाया जायगा। फिर दंड और पुरस्कार..."

कुंजुपात्तुम्मा शुरू से आखिर तक सब कह सुनाती। उसे यह सब जबानी याद था।

अपने बेटे या भाई के लिए दुलहिन चुनने के लिए आने वाली औरतें इस तरह के सवाल और जाँच-पड़ताल किया करती थीं।

अक्सर कुंजुपात्तुम्मा सोचती—अगर उसका भी कोई भाई होता...तो वह भी घरों में घुस जाती और सवाल-जवाब से वहाँ की लड़कियों को परेशान करती। जो एक मुसलमान लड़की के लिए जानना जरूरी है, वह सब जानती थी। वह भी तरन्नुम के साथ कुरान पढ़ सकती है। कुरान छूने के पहले बदन पवित्र कर लेना चाहिए। इसके लिए पहले स्नान करना होता है या वजू, जिसमें कुछ अरबी वाक्य दोहराते हुए हाथ-मुँह, चेहरा, नाक, कान, माथा इन अंगों को तीन बार साफ़ पानी से धोना जरूरी है। इसके बाद नमाज...वह भी कुंजुपात्तुम्मा अच्छी तरह जानती है। सुबह, लहर, अजर, मगरिब, इशा—इस तरह दिन में पाँच दफ़ा नमाज़ पढ़ी जाती है। अलावा इसके इस्लाम और ईमान की बारीक-से-बारीक बातें वह जानती है। इसमें उसे कोई मात नहीं दे सकता।

उसको देखने आई हुई औरतों में से एक ने पूछा: "आयिशा बीबी कौन थी?"

कुंजुपात्तुम्मा ने कहा: "मुत्तु नबी की घर वाली।"

मुहम्मद नबी की बीवियों में एक आयिशा बीबी भी थी।

"क्या आयिशा बीबी के कान छिदे हुए थे ?"

"हाँ।"

"कितने अलिकत (कर्णाभूषण) पहनती थी वह ?"

कुंजुपात्तुम्मा ने कहा : "सोवर्ग (स्वर्ग) से जिबरील (अलैस्सलाम) ने मोतियों के गुच्छे मिलाकर रसूल सल्लल्लाह अलैहि वसल्लम के हाथ में दिये। मुत्तु नबी ने उन्हें आयिशा बीबी के कानों में पहना दिया।"

कुंजुपात्तुम्मा के कानों में मोती के गुच्छे नहीं। दोनों कानों में कुल मिलाकर इक्कीस सोने की बालियाँ हैं। उनमें बड़े ही बारीक बड़ के पेड़ के पत्ते-जैसे सोने के दाने हैं। हवा के लगते ही वे सब मद्धिम आवाज के साथ डोल उठते हैं।

उसके कानों के पट्टे पर दो 'तक्का' (कुंडल) हैं। उनमें भी दो सोने के दाने लटकते हैं। गले में सोने के हारों के अलावा एक मोटा-सा 'पीच्चिङ्ङा' (गहना) है। उम्मा की तरह उसके गले में 'तालिपूट्टु' (मंगल सूत्र) नहीं। वह तो शादी के बाद ही पहना जाता है। उसके हाथों में कंगन है, जिसमें से झन-झन आवाज़ निकलती है। उंगलियों में अँगूठी है, जो बाप्पा की तरह सोने से मिले ताँबे की नहीं। मुसलमान मर्द के लिए खालिस सोना पहनना हराम है।

कुंजुपात्तुम्मा की उँगली में जो अँगूठी है वह खालिस सोने की है। हाथी की आँख-जैसी वह बनी है। उसकी कमर पर सोने की फेंट है, जिसमें बहुत-से ताबीज हैं। और फिर पैरों में अन्दर से पोले नूपुर हैं, वे भी सोने के। सबसे ज्यादा आवाज़ उसके चलते वक्त उन्हीं नूपुरों से निकलती है। उसे मालूम नहीं, उनके अन्दर क्या भरा है। सोने के दाने या ढेले के टुकड़े। ...कुछ है तो ज़रूर। वे ही ज़रा-सा हिलने-डुलने पर शोर मचा देते हैं।

कुंजुपात्तुम्मा हमेशा चुप बैठती, भूख लगे बिना ही खाना खा लेती, नींद आये बिना ही बिस्तर पर सो जाती।

वह चाँदनी रातों में घर के बीच वाले आँगन में खड़ी रहती। उस वक्त उसको अपने मन में एक तरह की अजीब बेचैनी महसूस होती। इसकी वजह क्या है, वह खुद नहीं जानती। वह सोचती कि यह महज खामखयाली है। आखिर उसे है किस बात की कमी ? इस खयाल के आते ही वह आकाश की तरफ़ देखकर हँसने की कोशिश करती। इतने में उम्मा उसे घर के अन्दर बुला लेती। बाहर वह इस तरह खड़ी नहीं रह सकती। कहीं कोई देख ले तो फिर क्या हो...

"आहाज (आकाश) में कौन है, उम्मा, जो मुझे देख ले ?"

उम्मा कहती : "इफरीत और जिन हैं, बेटी !"

आकाश से उड़कर जाने वाला कोई अदृश्य प्राणी उसे देख ले तो ?

आकाश सुनसान नहीं, जैसा कि दिखाई दे रहा है। मलक, जिन, इफ़रीत, शैतान और फिर कमबख्त इबलीस आकाश में उड़ते रहते हैं और इस दौरान में अगर इनमें से कोई देख ले तो...तो वह कुंजुपात्तुम्मा पर लट्टू हो जायगा और उसके बदन पर उसका दौर होगा।

इसलिए उम्मा के बुलाते ही वह घर के अन्दर भाग जाती थी।

आदमी, मलक या जिन चाहे कोई भी उसे देख ले, उसे कोई उज्र नहीं। मगर वह एक मुसलमान लड़की है।

वह क़ैदी है। रोशनी और हवा उसे मना है। उसे घुटन-सी लगती है। कुर्ता ढीला पड़ जाता है। अजीब-अजीब सपने देखकर अचानक जाग पड़ती है। ऐसे सपने, जिनके बारे में वह किसी से कुछ कह नहीं सकती। ऐसे सपने कि जो उसके अणु-अणु को गर्म कर देते हैं। इन सपनों की दुनिया से होकर उसने जिन्दगी के बीसवें साल को पार किया। इस दौरान में उसकी आँखों के सामने ही कुछ घटनाएँ घटीं।

उसके सारे गहने बाप्पा ने उतरवा लिये। उम्मा के भी। बाप्पा उन्हें बेच-बाचकर मुक़द्दमा लड़ रहे थे।

कुंजुपात्तुम्मा का गला, कान, हाथ सब सूने हो गए। बाप्पा और उसके साथी जब देखो अदालत में। मुक़द्दमा लड़ा जा रहा था। नतीजा चौंका देने के लिए काफ़ी था। कारण, अदालत ने बाप्पा के खिलाफ़ फ़ैसला सुना दिया था।

हार और बेइज्ज़ती—दोनों का बोझा ढोते हुए गाँव छोड़कर कहीं भाग जाने की नौबत आई।

ज़ायँगे कहाँ ?

साँझ का समय। उस दिन चाँद भी जल्दी निकल आया।

जिस घर में कुंजुपात्तुम्मा पलकर बड़ी हुई, उससे उसने 'अल-विदा' कही। वे घर से निकल पड़े—बाप्पा अकड़ते हुए आगे, उम्मा सिर झुकाये, आँसू बहातीं पीछे। और सबके पीछे कुंजुपात्तुम्मा, बिना किसी खास जज़्बे के। लोगों के देखते-देखते वे सड़क पर उतरे और मसजिद के सामने से नदी के घाट पर पहुँचे।

इस घटना से दुनिया का कुछ भी नहीं बिगड़ा। मगर...उनका अतीत, वर्तमान, भविष्य...सब मिट्टी में मिल गया। तो भी... चाँदनी की झलक में नदी और उसका रेतीला किनारा जगमगा रहा था।...पानी में लोग नहा रहे थे। ...बालू पर बैठे कुछ लोग हँसते-खेलते गप्पें मार रहे थे।...दुनिया के छोटे-से पुर्जे के घुमाव में भी कोई फ़रक नहीं पड़ा।

कुंजुपात्तुम्मा बाप्पा-उम्मा के साथ चलती रही, उसे खुद पता नहीं, कहाँ ? उसके पैर लड़खड़ाये, तन थक गया। फिर भी करिश्मों से भरी है यह दुनिया। लोगों से खाली रास्ता सामने पड़ा था।

चाँदनी में वह माँ-बाप के पीछे-पीछे चलती गई। मंज़िल कहाँ है ? क्या यह रात कभी खत्म होगी ही नहीं ?

४

दो पुरानी खड़ाऊँ

कुंजुपात्तुम्मा खुश थी। प्रतिवाद या प्रतिकार से मिली हुई निराली खुशी से उसका दिल भर गया। बेचारी मुसीबत की मारी थी ज़रूर, मगर कम-से-कम यहाँ आदमज़ादों के दर्शन तो मिलते रहेंगे, साफ़ हवा खाने को मिलेगी, सूरज की किरणों में खड़ी रह सकेगी, दूधिया चाँदनी में नहा पायगी। उछल-कूद सकेगी, खूब गा सकेगी—हालाँकि किसी गीत की एक भी कड़ी उसे आती नहीं। यहाँ उसे हर बात की आज़ादी है। भले ही मलक, जिन, इन्स कोई भी आये !

मगर अजीब बात है कि कोई आया नहीं। जिसके पास पैसा नहीं, उसकी भला कौन पर्वाह करता है।

लेकिन कुंजुपात्तुम्मा के दिल को इस खयाल से तसल्ली न मिली। दौलत नहीं तो क्या, उसमें जवानी तो है, और है कशिश। कुछ जवान उससे दिलचस्पी दिखाने लगे। कुछ उसकी तरफ देखकर

आँखें मारते और कुछ सिक्के दिखाते।

कुंजुपात्तुम्मा को खूब अच्छी तरह मालूम था कि यह सब उसके भले के लिए नहीं है। मगर उन शोहदों का क्या किया जा सकता था। सबकी नज़रों से बचकर वह उस इमली के पेड़ के नीचे जा बैठती या कुईं वाले उस पोखर के किनारे।

पोखर के पानी का रंग नीला था, सफेद और लाल कुईं के फूलों से भरा। कुईं के हरे-भरे गोल-गोल पत्ते पानी के ऊपर तैर रहे थे। खिले फूलों के परिरंभ से सुरभित मन्द पवन बह रहा था।

वहाँ वह घंटों बैठा करती।

पास ही घर था। कुंजुपात्तुम्मा अभी उसे अपना घर मानने की आदी नहीं हुई थी। लाल पत्थरों का बना छोटा-सा पुराना घर। पलस्तर नहीं लगा था, जिससे मालूम होता था कि खाल उधेड़ ली गई है। दो ही कमरे, एक रसोईघर। फूंस की छाजन, बीच-बीच में अनाज के पौधे उग आए थे।

घर में सामान ज़्यादा नहीं। दो-तीन चटाइयाँ और तकिये। एक पेटी, जो कपड़े रखने के काम आती है। दो-तीन ढिबरियाँ।

रसोईघर में, मिट्टी की दो-तीन हँड़ियाँ। मिट्टी के चन्द खपड़े, जिनमें तरकारी बनती, और तश्तरियाँ, खाने या कंजी पीने के लिए।

गुज़ारा मुश्किल से होता था। पुराने घर से कुछ लाया नहीं गया था। खाली हाथ निकल पड़े थे। मगर हाँ, दादा के उस मस्त हाथी के दाँत से बनी खूँटी वाली दोनों खड़ाऊँ किसी तरह अपने साथ लाने में उम्मा कामयाब हुई। पता नहीं, घर से निकलते वक्त उम्मा ने उन्हें पहन लिया था या नहीं।

जब देखो तब उम्मा उन खड़ाउँओं पर सवार रहती। जो मुँह में आता, हमेशा बकती रहती। गाल बजाती जाती, और मुँह में पान-पर-पान ठूँसती जाती।

बाप्पा ने पान खाना बिलकुल छोड़ दिया। अचानक उनके सिर के बाल पक गए। वह बातें भी कम करने लगे। शून्य दृष्टि से निरुद्देश्य ताकते रह जाते।

"सब अल्लाह, मुहम्मद नबी और उम्मतों की कुदरत है, और क्या ?" बाप्पा कहते : "मैंने एक वक्त की नमाज़ से भी मुँह नहीं मोड़ा, एक रोज़े से भी तौबा नहीं किया।"

तो फिर यह सब हुआ क्योंकर ? बात कुंजुपात्तुम्मा की समझ में आ गई। असल में कुछ हुआ नहीं। और मान भी लो कि कुछ हुआ, तो इसका कसूर किस पर ? उसका दिल कह रहा था कि बाप्पा का कोई कसूर नहीं। और उम्मा, मामियाँ और मामा भी उसकी नज़र में मुजरिम नहीं। कुरान छूकर झूठी गवाही देने वाले बड़े-बड़े मुखियों को वह कसूरवार कैसे ठहरा सकती है ? बात यह थी कि वह किसी को इसमें दोषी नहीं समझती थी। असली कसूरवार कमबख्त इबलीस जो है।

कुंजुपात्तुम्मा रोज दुआ माँगती : "या रबुल-आलमीन खुदा ! अब हमें कमबख्त इबलीस के सितमों से बचाना !"

इसके सिवा चारा ही क्या था ? उस कमबख्त के मारे ही तो नाकों दम था। उस मनहूस का कारनामा तो सुनो !

कुंजुपात्तुम्मा के पिता का जो नारियल का बागीचा और खेत था, उसका मालिक असल में वह अकेला नहीं था। उस बड़े-से मकान और जमीन-जायदाद पर बाप्पा और उसकी सात बहनों का बराबर का हक़ था।

"रात-ही-रात में हमारी उम्मा को बैलगाड़ी में ले जाकर कचहरी पहुँचा और हमारे भाई वट्टनटिमा से जो कुछ हमारे हक़ में था वह भी लिखवा लिया।" सात मामियों ने बाप्पा के नाम नालिश की।

कुंञुपात्तुम्मा के बाप ने अदालत में अर्जी दी कि मेरी प्यारी उम्मा ने सारी जायदाद मुझे वसीयत में लिख दी थी। मुकद्दमा सालों तक चलता रहा। दोनों तरफ से काफी पैसे खर्च किये गए। बड़े-बड़े नामी-गिरामी वकील मुकद्दमा लड़ने आये। दोनों दलों के लोगों ने मुकद्दमा जीतने के लिए एक भी मसजिद ऐसी नहीं छोड़ी जिसमें मनौतियाँ न की हों। मसजिदों में 'कोटि कुत्तु' (झण्डा फहराना) और 'चन्दनक्कुटम' (चन्दन का कलश) वगैरा (मनौतियाँ) चढ़ाये। अच्छी हैसियत के लोग झूठी गवाही देने आये। और हवा वट्टनटिमा के माफ़िक थी कि इतने में एक नया 'तिकड़म' पेश आया।

वट्टनटिमा की उम्मा पगली थी। उसकी अक्ल ठिकाने पर न थी, जब उसने वसीयत पर दस्तखत किये थे। लेकिन कब्र में पैर लटकाये बैठी उस औरत को बुलाकर कटघरे में खड़ा करना और उससे जिरह करना मुमकिन न था। इसलिए गवाह पेश हुए।

"वट्टनटिमा की उम्मा पगली थी।"

उन लोगों ने यही गवाही दी। 'बात असल में सच रही हो या झूठ, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि वट्टनटिमा की उम्मा की जायदाद की उसकी गहनें भी हक़दार थीं। उस पेचीदा मुकद्दमे के बारे में कुंञुपात्तुम्मा ज्यादा कुछ नहीं जानती थी। मगर इतना तो वह खूब जानती थी कि ये सब इबलीस कमबख्त के कारनामे हैं। किस्सा कोताह, मुकद्दमे का फैसला बाप्पा के खिलाफ़ सुनाया गया। मसजिद की मुख्तारी के खिलाफ़, और फिर उम्मा के 'पागलपन' के खिलाफ़, मुकद्दमा लड़ते-लड़ते बाप्पा की सारी ज़मीन और जायदाद बरबाद हो गई। बची रास्ते के किनारे की वह एक बिसवा ज़मीन।

उसमें एक छोटा-सा फूंस का घर था, चार सुपारी के पेड़,

नौ नारियल के पेड़, एक इमली का पेड़ और एक कुआ। एक कोने में कुई का एक पोखर। पोखर को देखकर कुंञुपात्तुम्मा फूली न समाई। इससे पहले उसने कुई वाला पोखर देखा न था। सफेद और लाल कुइंयों से पोखर भरा था। वह उन फूलों को किनारे बैठकर गिनने लगती। इतने में उम्मा या बाप्पा का बुलावा आ जाता। और उन फूलों की गिनती कभी खत्म न होती। बड़ा ही सुहावना लगता था वह दृश्य। मगर उस सुन्दरता में भी एक तरह की अव्यक्त भयानकता...एक नामालूम घिनौनापन ...

एक दिन एक घटना घटी। उसके बाद वह नहाने के लिए पड़ोस के कुए पर जाने लगी। पड़ोस के घर में कोई नहीं रहता था। हवा बदलने के लिए कभी-कभी कोई उसे भाड़े पर ले लेता था। ऐसे मौकों पर कुंञुपात्तुम्मा नहाने के लिए वहाँ न जाती। वहाँ जो कुआ था उसका पानी खूब ठंडा था। पास ही कपास की किस्म का एक पेड़ था, जिस पर चमेली की लता लिपटी हुई थी। लता सफेद फूलों से लदी थी। कुंञुपात्तुम्मा उन फूलों को चुन लेती, मगर गजरा बनाकर पहनने के लिए नहीं। मुसलमान हव्वाज़ाद जूड़े पर चमेली की माला पहन सकती हैं या पहनना मना है, उसे ठीक-ठीक मालूम नहीं था। तो भी उसे चमेली के फूल पसंद थे। वहीं बैठी वह केले की डोरी पर उन फूलों को गूँथ लेती। वहाँ बैठने में भी खूब मजा आता। कोई शोर-गुल नहीं; किसी के आने का अन्देशा भी नहीं। सड़क उस तरफ़ नीचे थी। उसके परे खेतों का सिलसिला और उसके भी उस तरफ़ कहीं दूर नदी बहती थी। नदी में नहाना हो तो सड़क से होकर जाना पड़ता था। और निकाह की उमर जिसकी बीत चुकी, वह आम सड़क पर से कौन-सा मुँह लेकर जा सकती थी ? वैसे तो उसके अपने घर में भी था एक कुआ। लेकिन वहाँ किसी तरह की आड़ नहीं थी कि किनारे खड़े होकर नहा सकें।

इसलिए एक दिन कुंजुपात्तुम्मा ने सोचा कि क्यों न पोखर में ही नहाया जाय। कोई देख थोड़े ही पायेगा।

दोपहर का समय था, धूप तेज़ थी। वह अंगोछा लेकर पोखर के किनारे पहुँची। कुर्ता उसने किसी तरह उतार लिया और किनारे उगी दूब पर डाल दिया। फिर अंगोछा कमर पर लपेटा, लुंगी खोली और कुर्ते के ऊपर रख दी।

अब वह धीरे-धीरे पानी में उतरी। छाती तक पानी में उतरने के बाद उसने डुबकी मारी। दो-चार बार गोते लगाने के बाद वह बदन मलने लगी। अचानक पानी पर नज़र पड़ी तो देखा कि पतली-सी कोई चीज़ सिकुड़ती-ऐंठती उसकी ओर जल्दी-जल्दी आ रही है।

"या ख़ुदा ! जोंक !"

कुंजुपात्तुम्मा जल्दी से ऊपर चढ़कर बदन पोंछने लगी। लो, जाँघ पर काला-सा कुछ...देखा तो घिन से काँप उठी। जोंक उसकी जाँघ पर चिपटी हुई थी, अपना सामने वाला और पीछे वाला सिर बदन पर जमाये।

'उम्मा ! बाप्पा ! दौड़ियो ! भागियो ! मार डाला ! खून चूस-कर मार डाला !'—कहकर चिल्लाने की इच्छा हुई उसे। मगर बदन पर कुर्ता न था, और न ही कमर पर लुंगी। क्या करती ?

वह जलती-भुनती खड़ी रही।

जोंक फूलती जा रही थी। उसका एक सिरा छूट गया और अपना फूला अंग लेकर वह लटकती रही। कुंजुपात्तुम्मा की घबराहट और बढ़ी। हिले तो नंगी जाँघ पर जोंक का चिकना तन रेंगने लगे। बाप रे !...वह दाँत पीस कर खड़ी रह गई। जोंक गेंद-सी गोल बनकर नीचे गिरी तो कुंजुपात्तुम्मा उछल पड़ी।

जाँघ पर खून लगा था और निकल भी रहा था। उसने चुल्लू से पानी भर कर खून धो डाला।

कमबख्त जोंक का क्या किया जाय ?

उसे गुस्से के साथ नफ़रत भी हो रही थी। जी में आया कि जोंक को अंधाधुंध गालियाँ सुनाये। मगर कौन-सी गाली ?

"इबलीस कहीं का ! तूने मेरा सारा खून चूस डाला !" कह-कर उसने उसे मारना चाहा। मगर मार न सकी। जोंक के भी कोई उम्मा होगी, कोई बाप्पा होगा। और पता नहीं यह नर जोंक है या मादा। कोई भी हो, चली जाने दो अपने घर।

"अरी जोंक ! आगे किसी का खून न चूसना, समझी ? खून चूसा तो तेरी मौत के बाद अल्लाह तुझे नर्क में डाल देगा, समझी ?" इतना कहकर उसने एक खपच्ची से जोंक को बड़ी सावधानी से, किसी तरह की चोट या दर्द पहुँचाये बिना, पानी में फेंक दिया।

एक 'वराल' (तालाब की बड़ी मछली) जोंक के पानी में गिरते ही—जैसे वह इसीकी ताक में थी—झपटकर 'टप' से उसे निगल गई।

कुंजुपात्तुम्मा ने देखा तो 'वराल' एक नहीं, दो थीं—'मियाँ और बीवी' और 'बाल-बच्चे भी हैं साथ !' नन्हें-से लाल-लाल बच्चे ! नीले पानी में तैरती लाल स्याही की बूँदों-जैसे !!

'अरी वराल ! तूने उसे हड़प क्यों लिया री ? तुझे पाप नहीं लगेगा ?'

मनुष्य वराल को पकड़कर अपने पेट में डालता है, मगर कुंजु-पात्तुम्मा ने उसमें मनुष्य का कोई पाप नहीं देखा। वह उस वराल-परिवार को अपलक देखती खड़ी रही। ममता-माया से खाली थीं उन मछलियों की आँखें। दोनों मछलियों के गलफड़ों से होकर मुँह का पानी बाहर निकल रहा था। ये अली की 'दुलफ़कार' नामक तलवार के लगने से बने छेद थे।

उनमें से जो तगड़ी वराल थी वह घूर-घूरकर कुंजुपात्तुम्मा

की ओर देख रही थी। कुंजुपात्तुम्मा को पा जाय तो एक ही झपट में चट कर जाय।

गीले बाल सुखाने के लिए उँगलियों से उन्हें छितराती-सँवारती कुंजुपात्तुम्मा ने पोखर को इस सिरे से उस सिरे तक एक बार देखा।

कुई के फूल पहले-जैसे लाल व सफेद दिखाई दिये। मगर उनके नीचे आदमी का खून चूसने वाली जोंकें, और उन जोंकों को निगलने वाली मछलियाँ थीं। तिस पर भी कुई के फूल थे कि उस तरफ़ नज़र तक नहीं उठाते थे और कुंजुपात्तुम्मा की ओर व्यंग्य भरी हँसी हँस रहे थे। वह हैरान होकर यह सब देख रही थी कि इतने में पोखर का एक और बाशिन्दा नमूदार हुआ।

यह था एक बड़ा-सा डोड़हा। उसका पेट सफेद था। सरकते-सरकते वह कुई के पत्ते पर चढ़ गया और सिर को पानी में डाले पड़ा रहा। अचानक कोई चीज़ मुँह में दाबकर उसने सिर पानी से बाहर उठाया। एक छोटी-सी मछली उसके मुँह में फँसी थी। मछली चीखी-चिल्लाई नहीं, तड़पती रही, पूँछ हिलाती रही। इतमीनान के साथ उसे निगलकर डोड़हा फिर पहले की तरह लेट गया।

कुंजुपात्तुम्मा ने गौर से देखा, और भी हैं पानी के कुछ बाशिंदे—कछुआ, मेंढक, जलभाँवर और जाने क्या-क्या !

कुई के फूल मन्द-मन्द मुस्करा रहे थे। सौन्दर्य के साथ भयानकता उस पोखर की विशेषता थी।

इस घटना के बाद कुंजुपात्तुम्मा उस पोखर के पास इस तरह जाने लगी, जैसे अपने से प्यार और घृणा करने वाली किसी सहेली के पास जाती हो।

घर पर कुंजुपात्तुम्मा कोई काम नहीं करती थी। वैसे तो काम की कमी न थी। लेकिन कोई काम सलीके से करना उसे आता ही न था। अब तो वह पहले से ज्यादा आज़ाद थी। मगर इससे क्या

हुआ ? खाना पकाना तो दूर, आग सुलगाना तक उसे नहीं आता था। उम्मा भी इस फन से महरूम थी।

बाप्पा को चावल-दाल तो लाना पड़ता ही था, उसे पकाने का जिम्मा भी उसीके ऊपर था।

बाप्पा अक्सर कहता : "औरत की जात में जनम लिया है तो कम-से-कम इतना तो जानना ही चाहिए कि चूल्हे में आग कैसे सुलगाई जाती है।"

सुनकर कुंजुपात्तुम्मा शर्म से सिकुड़-सी जाती। मगर बाप्पा उसे लक्ष्य करके नहीं, उम्मा को लक्ष्य करके यह कहा करता था। उम्मा उन पुरानी खड़ाउँओं पर 'टप-टप' चलती हुई कहती—"मैं आनामक्कार की लाड़ली बेटी हूँ।"

बाप्पा चुप रह जाता।

उम्मा के हाथों पर पानी डालकर जब तक कोई धुला नहीं देता, वह खाना न खाती। बस डटकर बैठी रहती।

बाप्पा गुस्से से उम्मा की तरफ़ देखता। कुंजुपात्तुम्मा उम्मा के हाथों पर पानी डाल देती। उम्मा कहती : "तेरे दादा के पास एक हाथी था, एक बड़ा-सा मस्त हाथी !"

बाप्पा चुपचाप सुन लेता, कहता कुछ नहीं। जब उम्मा की बकवास हद से ज्यादा हो जाती तो दिल की आँधी दिल ही में दबाकर धीरे से कहता : "अरी, तू ज़बान सँभाल !"

उम्मा पूछती : "और नहीं तो क्या कच्चा चबा डालोगे ? मैं आनामक्कार की लाड़ली बेटी हूँ, हाँ मुझे लेईनस (लाइसंस) है।"

उम्मा को 'लाइसंस' है कि जो चाहे बक ले।

"मेरी भली उम्मा ! चुप भी रहो न।" कुंजुपात्तुम्मा कहती।

"हरामजादी !" उम्मा कहती, "चुप रहूँ इसलिए न कि मैंने तुझे जन्म दिया है।"

तो असली मुजरिम कमबख्त इबलीस नहीं। कुंजुपात्तुम्मा म्लान हँसी हँसती। लेकिन ज्यादा दिन तक वह हँस नहीं सकी। उसके दिल में डर की जड़ जम चुकी थी। बाप्पा न जाने कब उम्मा का खून कर डाले ?

५

तूफ़ान चला, पत्ता नहीं झड़ा !

आदमी ऐसा क्यों बन जाता है ? — लाख कोशिश करने पर भी यह बात कुंजुपात्तुम्मा की समझ में नहीं आई। ढलती उम्र में मियाँ-बीवी के बीच अनबन क्यों पैदा हो जाती है ? क्या हर बाप्पा और हर उम्मा का यही किस्सा है ? एक-दूसरे को नोचने-खसोटने पर तुला रहता है। इस नोच-खसोट को देखकर कभी-कभी कुंजुपात्तुम्मा को हंसी आ जाती थी। मगर वह ज़बरदस्ती उसे रोक लेती। उसकी ज़िन्दगी एकदम उलट-पुलट हो गई थी। भरपेट खाना नहीं मिलता था। कपड़ों की बात न कहना ही अच्छा। बार-बार पहनने से और बार-बार धोने-पीटने से जैसे सब कपड़े पीले पड़ गए थे। आखिर इस सबका जिम्मेदार कौन था ?

सबसे अजीब बात यह थी कि अब उनका कोई मददगार न रहा था। उपेक्षित तीन प्राणी ! जब हालत अच्छी थी तो लोगों की कोई कमी न थी, राह चलते भिखमंगे भी उनसे रिश्ते जताते फिरते थे।

"रिश्ते में मामा हूँ" या "रिश्ते में चाचा हूँ !"

मगर अब 'रिश्ते' में कोई नहीं। वे तीन ही प्राणी बाकी रह गए। और उन तीनों में भी ... उम्मा को बाप्पा एक आँख नहीं भाता। बात-बात पर नुक्स निकालती, गालियाँ देती। धीमी आवाज़ में नहीं, गला फाड़-फाड़कर कि ठंडी सड़क तक सुनाई पड़तीं। गाँव-भर के लोग हँसी उड़ाने और कहकहे लगाने लगते। क्या किया जा सकता था ? आजकल तो उम्मा बाप्पा के नये-नये मज़ाकिया नाम ढूँढ़ निकालने में मगन थीं और इसी सिलसिले में उम्मा बाप्पा को 'चेम्मीनटिमा' (मछली का व्यापारी अटिमा) कहकर पुकारने लगी थीं।

बाप्पा ने मछली का व्यापार नहीं किया था। उसने ऐसे धंधों में अपनी किस्मत की आजमाइश की थी जिनमें ज़्यादा पैसे की लागत न हो। बीच में एक दफ़ा सूखी मछलियों के व्यापार में भी कुछ पैसे लगाये थे। यह बात नहीं कि उसे यह धंधा खूब पसन्द आया हो। बदन से बदबू आने लगती, आस-पास मछली की बुरी बास फैल जाती। सूखा 'परवा', 'स्रावु' (ह्वेल), 'ऐला', 'चाळा' (केरल में पाई जाने वाली मछलियाँ) आदि टोकरी में भरकर सिर पर लादकर दूर किसी हाट में बेचने जाता। वापस आते समय चावल और मछलियाँ साथ ले आता। पहले कुंजुपात्तुम्मा मछली खाती थी और मांस भी। बाद को उसने दोनों छोड़ दिए।

उसने उसी दिन से मछली खाना छोड़ दिया था जिस दिन पोखर में 'वराल' को जोंक निगलते देखा था। बाप्पा ने मछली का व्यापार बन्द करके कसाई का काम शुरू किया, तो उसने मांस खाने से भी तौबा कर लिया। हलाल करके एक तरफ़ रखे बकरी के सिर और खुली आंखें...बात तो बिलकुल मामूली-सी थी, लेकिन मन में कुछ खटकने लगता था। मछली या मांस पकाकर देने में उसे

कोई एतराज न था। मगर हाँ, अपने मुँह तक उसे कभी न ले जाती। बड़ी मुश्किल से खाना पकाने-परोसने का हुनर आजकल उसने सीख लिया था।

बाप्पा तड़के ही उठता। दाँत साफ करने के बाद और सुबह की नमाज़ से फ़ारिग होते ही कुंजुपात्तुम्मा उसे गिलास भर बिना दूध की चाय ला देती। उसे 'गड़गड़' पीकर बाप्पा बिस्मिल्लाह पढ़ता और सीना तानकर चला जाता। दो रुपये के पैसे उसके बटुए में रहते। दूर के किसी बाजार में जाकर महेन्द्र केला, आलू, सूरण, सुपारी, नारियल, जो कुछ सस्ते में मिलता, खरीद लेता—कहीं ले जाकर बिक्री करने के इरादे से।

"क्यों री, चेम्मीनटिमा मुहर भुनाने गया है क्या बाहर ?" पूछती हुई उम्मा बिस्तर से उठती। तब तक कौओं की काँव-काँव से दिशाएँ मुखर हो उठतीं। दिन काफी निकल आता और धूप चारों ओर फैल जाती। उम्मा अल्लाह से भी रूठ गई थी। नमाज़-दुआ एकदम बन्द थी।

"बहुत हो चुकी नमाज़...अरी हरामजादी ! पानी गर्म किया भी या यों ही ?"

गर्म पानी तो पहले ही से तैयार रहता। इसलिए कुंजुपात्तुम्मा कहती : "पानी कब का गर्म हो चुका है, उम्मा !"

पानी गर्म न हो तो उम्मा कभी स्नान न करती। इसलिए कुंजुपात्तुम्मा रोज पानी गर्म करके रखती। मगर उम्मा उसमें भी नुक्स निकाल देती कि या तो ज्यादा गर्म हो गया या कम। यहाँ आने के पहले उम्मा नहाने के बाद धुला कपड़ा पहनती थी। काफी दूध और शक्कर मिली गाढ़ी चाय पीती थी, घी में बसी मोटी 'पत्तिरि' (रोटी) खाती थी। अब वे दिन न रहे। फिर भी उम्मा अपने जीवन में कोई अदल-बदल करने के लिए तैयार न हुई।

इसलिए कुंञुपात्तुम्मा उम्मा के जितने कपड़े बचे थे सब रोज दोपहर तक धोकर सुखा लेती और स्नान के बाद उम्मा को ला देती। रही चाय-चखाव की बात, सो उसे ताड़ के गुड़ से मिली बिना दूध की चाय ही मयस्सर होती। कुंञुपात्तुम्मा की यह ईजाद थी कि चाय में शक्कर के बदले नमक मिलाकर भी उसे पिया जा सकता है। उम्मा यह सब पसन्द न करती। मगर लाचार थी। कुंञुपात्तुम्मा को कोसती हुई कि "हरामजादी ! तेरे पैदा होने के कारण ही तो..." गुड़ की चाय पी लेती। शुरू-शुरू में तो मारे गुस्से के मिट्टी का बर्तन पटक देती। मगर रोज़ नये-नये मिट्टी के बर्तन खरीदने के लिए पैसे आएँ कहाँ से ?

एक दिन बाप्पा ने कहा : "कल से इसे नारियल के छिलके में चाय देना।"[१]

सुनकर उम्मा दहाड़ें मारकर रोने लगी। कहा : "या मय्य-द्दीने ! या मनौती वालो ! सुन ही तो रहे हो न ? या मुत्तु (मुहम्मद) नबी। तू भी सुन रहा है न ? कहते हैं कि आना-मक्कार की दुलारी बेटी नारियल के छिलके में चाय पी लिया करे।"

और इसके लिए भी गालियाँ कुंञुपात्तुम्मा को ही खानी पड़ती थीं—"तू बदकिस्मत है। तेरा वह तिल बदकिस्मती का है री।"

उसके गाल के उस तिल को अब कौन नोच-खुरचकर मिटाने जाय।

यह सब देखकर बाप्पा की आँखें लाल हो जातीं। वह दबे स्वर में पुकारता : "अरी ! कोच्चुताच्चुम्मा !"

उस पुकार में एक धमकी छिपी रहती। इसलिए उम्मा चुप हो जाती। और ज्यों ही बाप्पा बाहर निकलता, फिर गालियों का

१. केरल में नारियल का छिलका लेने का मतलब भीख मांगने से है।

बाजार गर्म हो जाता—"हरामजादी ! बेहया ! बेशर्म !! तुझे काला साँप सूँघ जाय ! तेरा साया पड़ने के बाद ही तो सारा सत्यानाश..."

यही गालियाँ देने का तरीका था। सुनकर हर राह चलता शोहदा मज़ाक उड़ाने लगता।

कुंञुपात्तुम्मा कहती : "उम्मा, ज़रा धीमे !"

"जोर से चिल्ला-चिल्लाकर ही कहूँगी, समझी ? मुझे लाई-नस है जोर-शोर से कहने का, हाँ !"

एक दिन उम्मा जोर से कुछ बक रही थी कि बाप्पा सुनता हुआ आया। उम्मा से चुप रहने के लिए कहा गया, उम्मा ने माना नहीं। और एक बार दुहराया गया। फिर क्रोध से आँखें लाल किये हुए बाप्पा उम्मा के पास गया।

देखकर उम्मा मज़ाक में हँस पड़ी और तरन्नुम के साथ बोली : "चेम्मीनटिमा आनामक्कार की दुलारी बेटी को आँखें दिखा रहा है। ..." वाक्य पूरा भी नहीं होने पाया था कि एक भयानक घटना घटी।

बाप्पा ने दाहिने हाथ से उम्मा का गला पकड़ लिया। इस तरह कसकर पकड़ा कि उम्मा की आँखें पथरा गईं।

दाँत पीसते हुए बाप्पा ने कहा : "तू मर !"

बाप्पा ने उम्मा को एक ही हाथ से छोटी बच्ची की तरह उठाकर फर्श पर पटक दिया। दोनों खड़ाऊँ बाहर फेंक दीं। उम्मा अचेत पड़ी रही।

पलक मारते-मारते यह सब हो गया। कुंञुपात्तुम्मा सन्न रह गई, जैसे दुनिया में अँधेरा छा रहा हो, जैसे वह खुद किसी गहरे गढ़े में गिर गई हो।...बाप्पा ने उम्मा का खून कर दिया। लो, लाश सामने ही पड़ी है। उसे अपनी ज़बान पर काबू न रहा। वह खामोश खड़ी-खड़ी आँसू बहाती रही।

बाप्पा ने कहा : "बेटी ! रोना मत !"

इस दिलासा से कुंञुपात्तुम्मा का दुःख और बढ़ गया। वह आँसू बहाती रही। दुःख के मारे उसका दिल फटा जा रहा था। या रबुल-आलमीन ! अब क्या होगा ? मुसीबत-पर-मुसीबत ! कोई साथ नहीं, कोई सहारा नहीं। उम्मा चल बसीं।...अब बाप्पा को भी पुलिस कैद कर ले जायगी।

कुंञुपात्तुम्मा का अब कोई अपना नहीं।...उम्मा की मैयत ...अब कोई आकर उसे गुसल कराकर, कफ़न में लपेटकर, सन्दूक में रखेंगे और "ला इलाह इल्लल्लाह ! ला इलाह इल्लल्लाह" का नारा लगाते हुए उसे उठा ले जायँगे और मसजिद की कब्र पर दफ़न कर देंगे।...इसके बाद...कुछ सोचा नहीं जाता। कुंञुपात्तुम्मा की आँखों के सामने अँधेरा छा गया। वह फूट-फूटकर रो पड़ी।

"बाप्पा ! तुमने यह क्या किया ?"

"बेटी !" बाप्पा ने कहा, "रोओ मत ! बाहर जाकर बैठो !"

कुंञुपात्तुम्मा मुश्किल से बाहर जाकर वहाँ एक खंभे के सहारे खड़ी हो गई और देर तक आँसू बहाती रही। इस पर भी दिल को तसल्ली न मिली। अचानक उसे 'शज्रतुल मुन्तहा' याद आया।

'शज्रतुल मुन्तहा' एक बड़े पेड़ का नाम है। वह बहिश्त में है। यह सब उसने एक दिन मसजिद के एक वअज़ से सुना था। उस शजर के बर्गों (पत्तों) पर सब प्राणियों के नाम लिखे रहते हैं। हवा चलने पर उनमें से कुछ पत्ते झड़ पड़ते हैं। झड़े पत्तों पर जिनके नाम लिखे रहते हैं वे मर जाते हैं। कुछ पत्ते तो समय पर पकने के बाद झड़ते हैं। लेकिन ऐसा भी होता है कि कुछ पत्ते अपनी सब्जी छोड़ने के पहले ही झड़ जाते हैं और कुछ कोंपल के हाल में ही। और अब उम्मा के नाम वाला पत्ता...बस, इस खयाल के मन में उठते ही अन्दर से उम्मा की आवाज आई।

"या अल्लाह !" उम्मा कह रही थीं, "मेरा कोई नहीं; या मय्यद्दीन (मोहियुद्दीन) ! मेरा कोई नहीं !"

कुंञुपात्तुम्मा का सारा रंज काफ़ूर हो गया। सोचा : 'आँधी तो चली, मगर पत्ता नहीं गिरा।'

कुंञुपात्तुम्मा अन्दर गई। उम्मा उठ बैठी थी। बेटी को देखते ही छाती पीट-पीटकर रोने लगी।

"उम्मा ! चुप रहो न !" कहती हुई कुंञुपात्तुम्मा उम्मा के पास आई।

उम्मा गाने की तरह तरन्नुम के साथ कहने लगी :

"सहलाना री, सहलाना !
मुत्तुनबी ! सहलाना !
सहलाना री सहलाना !"

कहाँ सहलाना है, कुंञुपात्तुम्मा की समझ में न आया। पूछा : "कहाँ सहलाना है, उम्मा ?"

उम्मा ने उसी स्वर में कहा :

"गले पर, हाथों पर, पैरों पर...!"

"तू हट जा बेटी !" बाप्पा ने कहा और उम्मा के पास बैठकर उसे सहलाने लगा।

"कुंञुपात्तुम्मा तुम बाहर जाकर बैठो न ?" बाप्पा ने कहा।

वह बाहर चली गई।

अन्दर सुलह की बातचीत चल रही थी। उम्मा ने पूछा : "मेरा खून करके और किसी से सगाई करना चाहते थे, यही न ?"

इसका बाप्पा ने क्या जवाब दिया, यह कुंञुपात्तुम्मा ने सुना नहीं। वह आँगन में इधर-उधर टहलने लगी। इतने में बाप्पा को जोर से कहते सुना : "हम सबको आज 'तोबा' पढ़ना चाहिए।"

किये गए पापों की माफ़ी के लिए रबुल-आलमीन खुदा से

मिन्नत करना, आगे पाप न करने का पुख्ता इरादा करना—यह तो अच्छा ही है। मगर उस घर में 'तोबा' (की किताब) न थी। करीब-करीब सभी मुसलमानों के घरों में 'तोबा' रहता है। वह अरबी में लिखा गया है। लेकिन मुसलियारों (वाईज़ों) ने उसे 'अरब मलयालम' में छपवाकर बाँटा है। किसी के घर से बाप्पा उसे ले आयगा।

कुंञुपात्तुम्मा बाहर टहल ही रही थी कि उम्मा और बाप्पा बाहर आये।

उम्मा ने कहा : "तेल, मलहम, उबटन सब चाहिए।"

बाप्पा ने हामी भरी और कुंञुपात्तुम्मा से कहा : "तुम माँ के लिए ज़रा पानी गर्म कर रखना, बेटी !"

यह कहकर वह बाहर निकल गया।

कुंञुपात्तुम्मा पानी भरकर गर्म कर ही रही थी कि इतने में बाप्पा तेल-उबटन सब ले आया। उम्मा तेल मलकर नहाने लगी तो बाप्पा चला गया।

कुंञुपात्तुम्मा ने पूछा : "उम्मा ! मैं जाकर ज़रा नहा आऊँ ?"

उम्मा ने इजाज़त दे दी ! वह गमछा, नहाने के बाद बदलने के धुले कपड़े और बाल्टी-रस्सी लेकर निकल पड़ी।

उस दिन उसके जीवन में एक नया अध्याय शुरू होने वाला है, इसका उसे ज़रा भी अनुमान न था।

उम्मा ने कहा : "जल्दी आना, बेटी !"

उसने कहा : "अभी आई, उम्मा !"

वह चली। रास्ते में उसने सोचा, 'जब आँधी उठी थी, उस वक़्त अगर पत्ता गिरा होता...'

उसने दुआ माँगी : "या रबुल आलमीन खुदा ! आँधी भले ही चले, हमारा पत्ता कभी न गिराना !"

६

एक गौरैया का रोना

कुंञुपात्तुम्मा ने आँगन से ही एक गौरैया का रोना सुना था। थोड़ी दूर आगे बढ़ी तो उसे देखा भी। दो गौरैयों में झगड़ा हो रहा था। उनमें से एक करुण क्रन्दन कर रहा था। वे क्यों झगड़ रहे थे ?

कुंञुपात्तुम्मा ने 'श्-श् !' 'भुर्र् !' 'धुर्र् !' करके उन्हें उड़ाने का काफ़ी जतन किया, तब वे उड़े।

पोखर के पास से होकर पड़ोस के कुएं पर जाने के लिए रास्ते में जो नारियल के तने का पुल बना था, उस पर चढ़ी तो कुंञुपात्तुम्मा ने एक इमली के पेड़ पर बैठे उन्हीं गौरैयों को फिर झगड़ते देखा। उनमें से एक बड़े ही करुण स्वर में रो रहा था। वह मदद माँग रहा था, जैसे बाज़ की झपट से बचने के लिए नन्हा-सा चूज़ा। कुंञुपात्तुम्मा से रहा न गया। वह रस्सी-बाल्टी नीचे पटककर इमली की तरफ बढ़ी।

उसने चिड़ियों को बहुतेरा समझाया कि झगड़ा-फ़िसाद मत करो, चुप रहो ! मगर गौरैया थे कि उन्होंने एक न सुनी। बेरहमी के साथ एक-दूसरे पर वार करते रहे। दोनों पंछी एक अंगुल जितने बड़े भी न थे, मगर उनकी स्पर्धा तो देखो ज़रा ! कुंजुपात्तुम्मा आज़ाद चिड़ियों का झगड़ना पहली बार देख रही थी। मुर्गों की लड़ाई में अक्सर ऐसा होता है कि लड़ाकू मुर्गों में किसी एक को ऐन मौक़े पर दूर हटा दिया जाता है ताकि एक-दूसरे पर निर्दयता से चोंच मारकर वे खून न कर डालें।

कुंजुपात्तुम्मा ने फिर कहा : "कहना मानेगा भी या नहीं ? चुप रहना जी ! क्यों नाहक उसे मार रहा है ?"

उस झगड़े में एक गिलहरी भी दखल दे रही थी। वह उस इमली के पेड़ के तने से लगकर बैठी 'दुस-दुस' करके उन्हें मना रही थी।

कुंजुपात्तुम्मा ने गिलहरी की तरफ मुखातिब होकर कहा : "ये किसी का कहना मानें, तब न ?"

एक कठफोड़वा चिल्ला उठा, जैसे चेतावनी दे रहा हो कि चिड़ियों के मामले में गैर-चिड़ियों का यह दखल बेजा है। और फिर उड़कर एक नारियल के पेड़ के तने पर लाल फीते की तरह लटक गया और 'टुक-टुक' करके उस पर चोंच मारने लगा। गौरैया इमली से उड़कर आक के पेड़ पर बैठ गए और अपना झगड़ा जारी रखा। अचानक एक गौरैया, जो अपने प्रतिद्वन्दी के वार से घायल हो गया था, उड़ता-लड़खड़ाता और करुण विलाप करता नीचे गहरे और सूखे पत्तों से पटे एक जंगली नाले में[1] जा गिरा। दोनों पंख फैलाकर वह ज़मीन पर इस तरह औंधा पड़ गया जैसे कोई हाथ फैलाकर धरती का अंतिम आलिंगन कर रहा हो।

१. वर्षा के जल की निकासी के लिए इस तरह के नाले बने रहते हैं, जो गर्मी में सूख जाते हैं।

इस घटना से कुंजुपात्तुम्मा के दिल को भारी धक्का लगा। उसने कहा—"खबरदार ! तूने यह क्या किया ?"

वह नाले के किनारे गई। नाले में उतरना मुश्किल था। पता नहीं गौरैया की जान निकल गई, या अभी ज़िन्दा है। उसके मुँह में एकाध बूँद पानी की डाल दे तो शायद जी उठे ! मगर कहीं उस चिड़िया का नाम लिखा 'शज्रतुल मुन्तहा' वाला पत्ता गिर तो नहीं गया। वह पेड़ भी कितना बड़ा होगा ! कितने पत्ते होंगे उस पर ! सब पत्ते एक-जैसे नहीं होंगे। चींटी के नाम वाला पत्ता छोटा ही होगा। उससे बड़ा होगा गौरैया के नाम वाला पत्ता। सबसे बड़ा होगा हाथी का पत्ता। उसके दादा के हाथी के नाम वाला पत्ता सूख-कर 'शज्रतुल मुन्तहा' के नीचे पड़ा रहता होगा, या चूर-चूर होकर स्वर्ग की धूल से मिल गया होगा। कुंजुपात्तुम्मा को मालूम नहीं कि पेड़ के नीचे स्वर्ग में धूल या मिट्टी है या और कुछ। वह नाले के किनारे उगे 'पाणल' नाम के पौधों को पकड़ कर धीरे-धीरे नाले में उतर रही थी कि इतने में पैरों के तले की मिट्टी के खिसक जाने से पौधों समेत कलाबाजी खाती 'झम्म' से नाले में लुढ़क पड़ी।

"या रब !" गिरते-गिरते वह चिल्ला उठी। जाने कहाँ-कहाँ टकोरा-टकराया और चोट लगी। बाएँ हाथ की कुहनी के नीचे का चमड़ा छिल गया। वहाँ से खून निकल रहा था। मगर उसे उस वक़्त इसकी खबर न थी। उसे कुछ जलन व चिनचिनाहट-सी लगी। बस ! पहले उसने गौरैया को उठा लिया, तब जाकर खुद उठी। उसको लगा कि गौरैया के प्राण उड़ गए हैं। सोचा, थोड़ा-सा पानी पिलाकर देखा जाय ? इतने में उसने अपनी कुहनी से खून बहता देखा।

"तेरी बदौलत मेरा हाथ छिल गया न ?" उसने कहा। और बाएँ हाथ की उंगलियों से गौरैया की चोंच खुलवाकर दाहिने हाथ की तर्जनी से खून की एक बूँद उसने मुँह में टपका दी। फिर उसके

पंख सहलाकर ठीक किये। और जब उसे घुमाकर उसके पेट की तरफ देखा तो वह अचानक चिल्ला उठी—"या रब ! यह तो मादा है।" उसके होश-हवास उड़ गए। गौरैया के पेट की खाल हल्की लाली लिए सफेद थी, जैसे मांड़ की पपड़ी। उसके रोओं के बीच से दो छोटे अंडे उसे साफ़-साफ़ दीख रहे थे...ओह ! ठीक वैसे ही जिस तरह बाप्पा ने उम्मा का गला घोंटकर...। उसने पूछा : "मियाँ गौरैया, बीवी को क्यों मारना चाहता था ?"

उसे मालूम हो गया कि अभी उस गौरैया की जान में जान है। उसकी आँखें खुली थीं। उनमें से वह उसकी जान झाँक सकी। वह धीरे से उठी। उठते वक्त नाले के किनारे जो एक जवान खड़ा था, उसकी ओर उसका ध्यान नहीं गया। ऊपर चढ़ने का रास्ता न पाकर वह घबरा-सी गई। नाला सूख गया था, पानी बिलकुल न था। उसीसे होकर थोड़ी दूर चलने पर खेत मिलेगा। मगर वहाँ से चलना ठीक नहीं। आम रास्ते से जाना ही ठीक है। क्या उपाय किया जाय ? इसी पशोपेश में खड़ी थी कि किसी की आवाज़ सुनाई पड़ी। वैसे तो वह डरी नहीं, मगर दिल में धुकधुकी-सी हुई।

एक अजनबी नौजवान पूछ रहा था : "गौरैया जिन्दा है ?"

वह चुप खड़ी रही कि समझ ले, सवाल सुना नहीं। छिः छिः ! बेहयाई की हद हो गई। वह सिर झुकाकर ज़मीन की तरफ़ देखने लगी। सूखे पत्तों पर गिरी खून की बूँदों के चारों ओर सैकड़ों चींटियाँ जमा हो गई थीं।

"ऊपर निकल नहीं पा रही हैं क्या ?" फिर आवाज़ आई।

बात असल में ठीक है, ऊपर निकल नहीं पा रही है। फिर भी कैसे समझा दे ? आखिर कंजुपात्तुम्मा ने कहा : "दुश्वार है।"

"निकलना दुश्वार है क्या ?"

"हाँ !"

'हाँ' कहना ठीक हुआ क्या ? लोग जान लेंगे तो क्या होगा ? एक लड़की ने, जिसकी शादी की उम्र बीत चुकी, एक अजनबी नौजवान के साथ बातचीत की। खयाल आते ही कुंजुपात्तुम्मा का सारा बदन काँप उठा। इतने में उसने देखा कि उस तरफ़ से कुछ ढेले लुढ़क पड़े। जवान उतरकर आ रहा था। उसने सफेद लुंगी ओर कुरता पहन रखा था। कलाई पर सोने की घड़ी, बाल बनाये हुए।

बस, इतना ही देख सकी वह। 'पाणल' की झाड़ियों का सहारा लिये वह धीरे-धीरे उतर रहा था। कहीं लुढ़क तो न पड़ेगा, जैसे चन्द मिनट पहले वह खुद लुढ़क पड़ी थी। या रब ! जरा सँभल के !...कुंजुपात्तुम्मा घबरा उठी।

"जिन्दगी-भर तुम-जैसी एक लड़की नहीं देखी मैंने। क्या नाम है गौरैया का ?" हाँफते हुए उस नौजवान ने पूछा। पर-कटी मूँछ और हँसती आँखें। कुंजुपात्तुम्मा जितना गोरा तो नहीं।

उसने सोचा उसीका नाम पूछ रहा है। कहा : "कुंजुपात्तुम्मा।"

"कुंजुपात्तुम्मा ?"

"हाँ।"

"बहुत अच्छा," जवान ने कहा, "कुंजुपात्तुम्मा का ही खून शायद इन पत्तों पर पड़ा है।"

"हाँ" कहने के साथ ही उसे लगा कि कुहनी के नीचे दर्द हो रहा है। उसने हाथ मोड़कर देखा—कंकड़ या ठूँठ की रगड़ खाकर चमड़ा छिल गया था, खून निकल रहा था।

"देखूँ तो सही," जवान ने कहा, "हाथ ऊपर उठाओ, ताकि खून बहना बन्द हो जाय।"

जवान ने कुरते की जेब से रूमाल निकालकर उसे फाड़ा।

उसके तीन टुकड़े किये। उनसे पट्टी बनाई। इसके बाद सिगरेट की पेटी से सिगरेट निकालकर उस पर लिपटा कागज फाड़ दिया और तमाखू हथेली पर डाला।

"हाथ जरा दिखाना," जवान ने कहा।

कुंजुपात्तुम्मा ने हाथ पसार दिया। जवान ने घाव पर तमाखू रखकर धीरे से दबाया। छाती कहीं जवान को छू न जाय, इस खयाल से कुंजुपात्तुम्मा जरा झुक-सी गई। उस वक्त उसने जो कुछ देखा, उससे मन में दुःख के साथ धक्का भी लगा। उसने देखा कि उस जवान के बाएँ हाथ की छिंगुनी गायब! जैसे कट गई हो।... कैसे कट गई...? उसने यह पूछा नहीं।

जवान ने पूछा : "दर्द हो रहा है क्या ?"

"न।"

"बिलकुल नहीं ?"

"थोड़ा-सा।"

"खैर, कोई बात नहीं। हाथ भिगोना नहीं। एकाध दिन में घाव भर जायगा।" कहते हुए जवान ने उसके हाथ पर पट्टी बाँध दी। उसके बाद एक सिगरेट सुलगाकर हँसते हुए कहा : "कुंजुपात्तुम्मा, ऊपर कैसे चढ़ोगी ?"

कुंजुपात्तुम्मा को कोई उपाय न सूझा। मगर उसे डर या घबराहट का बिलकुल अहसास न हुआ। जैसे सर्दी के समय आग के पास खड़ी हो...पता नहीं क्यों, कुछ वैसा ही अनुभव हो रहा था उसे।

"दिखाना जरा गौरैया को।"

कुंजुपात्तुम्मा ने हाथ की पकड़ ढीली कर दी। गौरैया एक धीमी आवाज के साथ, प्यार या आभार-सा प्रकट करता, उड़ गया।

"कुंजुपात्तुम्मा ! तुम उड़ सकती हो ?"

"नहीं तो।"

"तो आओ, पंख लगा देंगे," कहकर जवान कुंजुपात्तुम्मा का हाथ पकड़कर ऊपर चढ़ने लगा। बीच-बीच में "डरो मत, चुपचाप आ जाओ मेरे साथ" कहकर उसने उसे तसल्ली दी। कुंजुपात्तुम्मा को सोचकर अचरज हुआ कि इतनी जल्दी वह कैसे ऊपर चढ़ आई। ऊपर पहुँचने पर जवान ने कहा—"तो अब तुम जाओ !" और हँसते हुए तेजी से उतरकर वह गायब हो गया।

कुंजुपात्तुम्मा वहाँ से चलने लगी तो उसे लगा कि वह चाँदनी में टहल रही है; और उसके अणु-अणु से सुखद रोशनी टपक रही है।

वह बाल्टी-रस्सी और कपड़े लेकर पड़ोस के घर के कुए के पास गई। नहाने से पहले उसने चमेली के बहुत-से फूल एक पत्ते में जमा किये। इसके बाद कुरता खोला। कपड़ा उतारकर अंगोछा पहन लिया। बाल खोल दिये और बाल्टी कुए के अन्दर उतारने लगी। बाल्टी पानी को छूने ही वाली थी कि उसे अचानक उस जवान की याद हो आई, जो उसे मना कर रहा था—"हाथ भिगोना नहीं।" अजीब बात है कि इतने में मारे शर्म के उसके कान तक लाल हो गए और घबराहट में बाल्टी-रस्सी कुए में छूट गई। सारे कपड़े समेटकर उनमें छाती छिपाये वह नीचे बैठ गई। कारण, वह जवान उस घर का द्वार खोलकर बाहर आ रहा था।

"अरे !...कुंजुपात्तुम्मा नहा रही है क्या ?" उस जवान ने कहा, "पानी चाहिए था। मुझे मालूम न था, थोड़ा पानी चाहिए। लेकर अभी-अभी चला जाऊंगा। एक गिलास पानी..."

कुंजुपात्तुम्मा ने कहा : "बाल्टी कुए में गिर गई।"

"क्या ?"

"बाल्टी कुए में...।"

जवान ने हँसते हुए कुए में झाँककर देखा।

"अब कैसे नहाओगी?" उसने पूछा। कुंजुपात्तुम्मा चुप रही; 'रस्सी-बाल्टी के बिना घर लौटेगी तो उम्मा खफा हो जायगी।'

वह जवान कछ बाँधकर धीरे-धीरे कुए की मुँडेर से नीचे उतरा और बाल्टी लेकर ऊपर आया। फिर एक गिलास में पानी लेकर जाते वक्त कहा : "अच्छा! अब तुम स्नान कर लो! मगर देखो, घाव भिगोना नहीं।"

जवान ने घर में घुसकर दरवाजा बन्द कर लिया।

कुंजुपात्तुम्मा कपड़े पहनकर बाल्टी-रस्सी लेकर घर की ओर चली। वह घर जाकर नहाई। उसने बार-बार उस नौजवान को याद किया। शर्म के मारे या किस कारण ठीक-ठीक पता नहीं, उसका सारा चेहरा और बदन जैसे धू-धू करने लगा। 'कौन है वह जवान? उस घर में कैसे आया?'

उस रात कुंजुपात्तुम्मा ने न कुछ खाया, न पिया। पूछने पर कहा—"मुझे नहीं चाहिए।" बाप्पा ने कारण पूछा। तो उसने कहा : "मेरे दिल में दर्द है!"

फिर सब मिलकर 'तोबा' पढ़ने बैठे तो उस वक्त भी कुंजुपात्तुम्मा ने उस अनजान नौजवान को याद किया। रात काफी बीत चुकी थी जब वे 'तोबा' के लिए बैठे। ढिबरी की बत्ती के सामने बैठकर बाप्पा तोबा पढ़ रहा था और उम्मा और कुंजुपात्तुम्मा उसे भक्ति के साथ दुहरा रही थीं। तीनों हरेक आयत को तीन मुख्तलिफ़ आवाज़ों में रट रहे थे।

"हमारे मालिक! हम सब तुमसे दुआ माँगते हैं, मालिक! सभी छोटे गुनाहों के लिए, सभी बड़े गुनाहों के लिए, सरे आम किये गए गुनाहों के लिए, छिपकर किये गए गुनाहों के लिए, पछताकर,

डरकर, तोबा कहते हैं, मालिक!" इस तरह शुरू करके तोबा कहना यों खत्म किया—"कल्ब को ओज़वास बनाने वाले इबलीस कमबख्त के आतंक से हमें बचाना, मालिक! सबको फिरदौस नाम के स्वर्ग में दाखिल करके, तुम्हारी लंबी उम्र और नबी की शादी अपनी ही दोनों आँखों से देखने और उसमें शामिल होने में मदद करना, मालिक! आमीन!"

इसके बाद उम्मा कुछ दिन चुप रही, कोई हल्ला नहीं मचाया। "बड़ी मनौतियों के बाद पैदा हुई लड़की है," कहकर वह कुंजुपात्तुम्मा का लाड़-प्यार करती रही। मगर ज्यादा दिन यह हाल न रहा। फिर रह-रहकर उस पर भूत सवार होने लगा। फिर गालियों, नुक्ता-चीनियों का बाज़ार गर्म हुआ। बाप्पा को भी जली-कटी सुनाती। बाप्पा को खिझाने के लिए कसीदे कसती कुंजुपात्तुम्मा पर। अगर जवाब देने जाती तो तुरंत गरज उठती : "इसीलिए तो निकाह करके तुझे कोई नहीं ले जाता। बैठी-बैठी सड़ रही है, सो अपनी बदकिस्मती ही की वजह से तो। मेरा निकाह हुआ चौदह साल की उम्र में। और तू बाईस साल की हो गई, बाईस साल की—"

बाप्पा कहता : "तुम चुप बैठोगी भी या नहीं? अल्लाह की दुआ से उसकी शादी इसी साल हो जायगी। मैं लड़का ढूँढ रहा हूँ।"

"तब तो हो गई इसकी शादी।"

उम्मा की राय में कुंजुपात्तुम्मा से निकाह करने के लिए अब कोई नहीं आयगा।

आयगा क्या देखकर?

"दहेज के लिए कुछ है? कोई सोने का गहना है? कुछ भी नहीं।"

बाप्पा कहता : "कोई-न-कोई आयगा ही।"

'कौन आयगा ?' दिल को चकरा देने वाला सवाल था। चाहे जो कोई आये, घर पर चैन का नाम न रहेगा। यहाँ हमेशा गालियाँ दी जाती हैं। कोसा जा रहा है। हर बात पर उम्मा टाँग अड़ा देती हैं। नुक्ता-चीनी की जाती है। वह चाहती है कि उससे सलाह लिये वग़ैर गाँव में कोई कुछ न करे। लेकिन उसकी सलाह को पूछने वाला वहाँ कोई न था। इसलिए उम्मा अपनी सलाह के दुश्मनों को जली-कटी सुनाती। राह चलते शोहदे उसका मज़ाक उड़ाते और बाप्पा को उनसे उलझना पड़ता—वरना उम्मा उन पुरानी खड़ाउँओं पर चढ़कर उनसे लड़ने निकल पड़ती और उन छोकरों के बाप-दादों और परदादाओं को खरी-खोटी सुनाती। उम्मा का दावा है कि उसे 'लाइसंस' है कि वह जो चाहे कर सकती है। मसजिद की मुख्तारी में उसे भी हिस्सा मिलना चाहिए। मसजिद के 'खतीब' या मुक्री की तबदीली के पहले उम्मा की इजाज़त लेनी चाहिए। मगर उम्मा से इजाज़त लेने कोई न आता। इसीलिए उसका पारा और भी चढ़ जाता।

बाप्पा कहता : "तू चुप रहेगी भी या नहीं ?"

"चुप न रहूँ तो क्या चेम्मीनटिमा कच्चा चबा डालेगा ?"

"खामोश !" बाप्पा की वह धमकी भरी चितवन !...

कुंञुपात्तुम्मा काँपने लग जाती। पता नहीं अब क्या होगा। वह धीरे से पुकारती : "बाप्पा !"

बाप्पा उसकी ओर फातिहाना अन्दाज से देखता और चुपचाप उठकर बाहर चला जाता।

उम्मा और बाप्पा में फिर अनबन शुरू हो गई। ऐसा कैसे हुआ ? कुंञुपात्तुम्मा हमेशा एक जगह बैठी रहती। बार-बार उस जवान को वह याद करती। आजकल वह दिखाई नहीं पड़ता। कहाँ गया वह ? कहाँ से आया था ? नाम क्या था उसका ? मज़हब

क्या ? कुछ भी पता नहीं। एक भला आदमी, जिसके साथ जिन्दगी-भर में सिर्फ एक बार मुलाकात हुई। वह चेहरा और वह मुस्कराहट। वह कटी उँगली...जाने क्यों, उस कटी उँगली की याद उसे बार-बार आती रहती। वह सुनसान घर, कुए के पास की वह चमेली की बेल, जो फूलों से लदी है। और उस बड़े बगीचे में और कुछ नहीं। सिर्फ सूखी घास। उस गुमनाम जवान की बाँधी पट्टी कुंञुपात्तुम्मा ने खोलकर देखी—घाव भर गया था।

सब पुरानी स्मृतियाँ-मात्र रह गईं।

दिन बीतते गए। एक रोज़ सुनने में आया कि वह घर और बगीचा किसी ने मोल ले लिया है। किसने लिया है मोल ? मगर दो-तीन दिन बाद उसने इसके बारे में जो सुना उससे उसे बड़ा दुःख हुआ। कहीं दूर से आने वाले किसी ने वह घर खरीद लिया है। हवा बदलने के लिए वे यहाँ आये हुए हैं। कुल तीन जने। काफ़िर हैं। एक अधेड़ मर्द और औरत। और फिर एक फैशन की पुतली नौजवान काफ़रिन !

कुंञुपात्तुम्मा का सारा बदन दुख उठा। गरीब ने अपने को अनाथ व बेमददगार पाया। उसने अपनी बदकिस्मती पर आठ-आठ आँसू बहाये। तड़पते दिल से अक्सर खुदा से वह दुआ माँगा करती : 'या रबुल आलमीन !'

हे सारे संसार के सिरजनहार ! बस इतना ही ! वह दिल में उमड़ती-घुमड़ती हसरतों को लेकर रह गई।

क्या थीं उसकी हसरतें ?

७

बुद्धू कहीं की !

एक दिन दोपहर के वक्त कुंजुपात्तुम्मा ने देखा कि पड़ोस में नई आई वह 'पतरास' (नाज़-नखरे) वाली नौजवान काफ़रिन पोखर के पास खड़ी अपनी साड़ी और ब्लाउज़ उतार रही है। वह सिर्फ बॉडीज़ और घाघरा पहनकर खड़ी है।

'बाप रे ! कुरते के नीचे एक और चुस्त कुरता। और कपड़े के नीचे यह...बाप रे !' कुंजुपात्तुम्मा ने अपने-आप कहा। अचानक उसका सारा बदन धू-धू करने लगा।

'या खुदा ! वह काफ़रिन पोखर में नहाने जा रही है ! खून चूस-चूसकर जोंक मार डालेगी उसे, और क्या ?'

कुंजुपात्तुम्मा घर से बेतहाशा भागी। इस भागम-भाग में उसके बाल खुल गए। फिर भी उसने काफ़रिन के पास आकर ही दम लिया।

"असनान न करना जी ! असनान न करना उस पोखर में," वह हाँफती हुई बोली।

वह काफ़रिन बिना किसी घबराहट के कुंजुपात्तुम्मा से बोली : "अरी बुद्धू ! असनान नहीं, स्नान कहो।"

कुंजुपात्तुम्मा ने फिर कुछ नहीं कहा। बड़ी वह बनकर आई है। तो फिर जोंक के लिपट जाने से ही मर जाने दो, मेरा क्या ? कहती है "असनान नहीं, स्नान कहना।" असनान कहा तो भला किसी का क्या बिगड़ता है ? देखो न छोकरी की शान ! कुंजुपात्तुम्मा ने सोचा, शायद सब काफ़रिन ऐसी ही हों। मगर पुरानी स्मृतियाँ उसमें जाग उठीं। उन दिनों जब वह छोटी-सी लड़की थी, उसका बाप्पा उसे सजा-सँवारकर नदी में स्नान कराने ले जाया करता था। घाट पर मिलने वाली काफ़िर उस्तानियाँ उसके साथ बड़े प्यार से पेश आती थीं। और यह लड़की भी उन्हीं की तरह बातें कर रही थी।...मगर थी उनसे बढ़कर नखरेबाज़ ! कुंजुपात्तुम्मा 'वराल' (मछली) को देखने के लिए तालाब के किनारे जा खड़ी हुई।

"अरे ! कितने अच्छे हैं तुम्हारे सिर के बाल !" उस फैशनेबिल लड़की ने कहा : "लो, एक काला तिल भी। बड़ी खूबसूरत हो तुम !" फिर कुरता पहनकर साड़ी लपेटते हुए वह कुंजुपात्तुम्मा के पास जा खड़ी हुई। उसने पूछा : "गोरी ! ज़रा बताओ तो सही, इस तालाब में स्नान करने के लिए आम लोगों पर पाबंदी क्यों लगाई गई है ?"

कुंजुपात्तुम्मा ने कहा : "मेरा नाम गौरी नहीं।"

"अरे ! गौरी नहीं, गोरी," नखरेबाज़ लड़की ने हँसते हुए कहा, "तो फिर तुम्हारा नाम ?"

"कुंजुपात्तुम्मा !"

"नाम तो बड़ा अच्छा है। खैर यह तो बताओ कि इस तालाब में नहाने से क्या नुक़सान हो सकता है ?"

"जोंक लग जायगी।"

"नर जोंक या मादा ?"

"मियाँ और बीवी दोनों। एक दिन मुझसे एक जोंक ऐसी लिपट गई कि सारा खून चूस लिया।" कुंजुपात्तुम्मा ने कहा : "फिर उसे एक 'वराल' ने निगल लिया। इस पोखर में जल-सर्प भी रहते हैं।"

इसके बाद कुंजुपात्तुम्मा ने जोंक के काट खाने का किस्सा बड़ी मार्मिकता के साथ कह सुनाया। जाँघ पर जोंक के लटकते रहने का ज़िक्र आया तो नखरेबाज़ लड़की मारे डर के काँपने लगी। उसकी आँखें पथरा गईं। उसके मुँह से 'ब्ओ' की आवाज़ निकल पड़ी, जैसे हाथी का बच्चा दहाड़ता है। उसने कहा : "अगर मैं होती तो चीख-चिल्लाकर ऐसा कुहराम मचा देती कि सारे लोग यहाँ आ जाते और मैं खुद बेहोश होकर गिर पड़ती।"

लेकिन कुंजुपात्तुम्मा तो चिल्लाई नहीं। वह बेहोश भी नहीं हुई। इस पर उसे फख्र हुआ। वह इमली के पेड़ के नीचे गई। वहाँ उसने इमली का एक फल पड़ा देखा। उसने उसे उठा लिया, छिलका अलग किया और तोड़कर मुँह में डाल लिया।

नखरे वाली ने उसके पास जाकर पूछा : "यह तुम क्या खा रही हो ? इमली ?"

"हाँ !" क्या इमली सभी औरतें बराबर पसन्द करती हैं ? इस पर कुंजुपात्तुम्मा को सन्देह है। फिर भी उसने पूछा : "खाओगी ?"

"दे दो न एक छोटा-सा टुकड़ा !"

नखरे वाली के कहने के ढंग से कुंजुपात्तुम्मा को लगा कि उसके मुँह में पानी भर आया है। उसने इमली का एक बड़ा-सा टुकड़ा लड़की को दे दिया। उसने उसे खा लिया। अवसर औरतें जिस तरह खाती हैं उस तरह नहीं। न तो आँखें ही उसकी सिकुड़ीं

और न चेहरे का रंग ही बदला। वह काफ़रिन, जैसे ही इमली का फल उसे मिला, मय बीज के उसे निगल गई।

देखकर कुंजुपात्तुम्मा को बड़ा अचरज हुआ। कहा : "निगलना नहीं चाहिए।"

"अगर निगल लिया तो ?"

"पेट में जाकर उगेगा और बड़ा पेड़ बन जायगा।"

काफ़रिन लड़की ने कहा : "मगर मेरे पेट में अगर पत्थर का टुकड़ा डाला जाय तो भी पच जायगा। लोगों का कहना है कि यह मेरी उम्र का असर है।"

कुंजुपात्तुम्मा ने इमली का एक बड़ा टुकड़ा उसकी ओर बढ़ाते हुए पूछा : "क्या उम्र हुई।"

"सत्रह।"

"उम्मा कहती हैं कि मेरी उम्र बाईस साल की है।" कुंजुपात्तुम्मा ने कहा।

"और बाप्पा क्या कहता है तुम्हारी उम्र के बारे में ?"

कुंजुपात्तुम्मा चुप रही।

"अरी बुद्धू ! चुप क्यों है ?"

"मेरे को बुद्धू क्यों बुलाती है ?"

"बुद्धू ! ऐसे नहीं कहते। यों कहना चाहिए कि मुझे बुद्धू क्यों कहती हो। अब पूछो कि मैं तुमको बुद्धू क्यों कहती हूँ। असल में मैं खुद यह नहीं जानती। मेरे 'इक्काका' (बड़े भाई) मुझे 'बुद्धू कहीं की' कहकर पुकारते हैं।"

'इक्काका ! यह काफ़रिन मुसलमानों का तरह बड़े भाई को इक्काका क्यों कह रही है ?'

"जहाँ तक मैं समझती हूँ, बुद्धू औरतों का पर्याय है। और मेरे इक्काका कभी-कभी 'लुट्टाप्पी' कहकर भी मुझे पुकारते हैं।"

"इक्काका का नाम क्या है ?"

"निसार अहमद।"

"निसार अहमद ! और तुम्हारा ?"

फैशनपरस्त लड़की ने जवाब दिया : "आयिशा।"

"तुम लोगों की जात क्या है ?"

उस साड़ीपोश फैशन की पुतली ने जवाब दिया : "इस्लाम !"

"या रबुल आलमीन !" कुंञुपात्तुम्मा ने पूछा : "हमारे ही जैसे ?"

"नहीं ! हम असली मुसलमान हैं।"

'असली मुसलमान ! .. कान छेदकर 'अलिकत'[१] नहीं पहनती। उसकी जगह कनपटी पर कुंडल पहने हुए हैं। साड़ी है, ब्लाउज़ नाम का कुर्ता है. और उसके भी नीचे चुस्त एक और कुर्ती है, और तिस पर दावा यह कि हम असली मुसलमान हैं।'

"नाम क्या बताया अपना ?"

"आयिशा ! और चाहो तो आयिशा बीबी या बेगम आयिशा कहकर भी पुकार सकती हो। कालेज में मेरा नाम आयिशा बीबी है। घर पर माँ-बाप महज आयिशा पुकारा करते हैं। और यह तो पहले ही बता चुकी हूँ कि इक्काका मुझे 'लुट्टाप्पी' या कभी-कभी 'बुद्धू कहीं की' कहकर पुकारना पसंद करते हैं।"

आयिशा मुहम्मद नबी की घर वाली का नाम है।

कुंञुपात्तुम्मा चकरा गई कि यह भी किस ढंग के मुसलमान होंगे ! पूछा : "वह मर्द जिसका चेहरा सफाचट है और सिर के बाल बनाये हुए हैं, वह तुम्हारा...?"

---

१. 'अलिकत' : कर्ण शष्कुली छेदकर पहने जाने वाले आभूषण, जो मुसलमान औरतें पहनती हैं।

आयिशा ने जवाब दिया तो उसकी आवाज में उपहास का पुट था : "वह है मेरा बाप। और फिर वह साड़ी वाली है न, वह मेरी माँ है।"

आयिशा ने पूछा : "वह लम्बे कद वाला मर्द तुम्हारा बाप है क्या ?"

"हाँ !"

"और दिन-रात 'टर्र-टर्र' करने वाली वह..."

"वह मेरी उम्मा है।"

आयिशा ने पूछा : "वह गला फाड़-फाड़कर इस तरह क्यों बातें करती है कि पड़ोसियों की नींद हराम हो जाती है। ऐसा करना मुसलमान औरतों के लिए ज़ेबा नहीं देता।"

कुंञुपात्तुम्मा ने कुछ नहीं कहा।

आयिशा ने कहा : "तुम्हारी माँ हमारे घर के सामने वाले उस छोटे नाले में टट्टी क्यों करती है ?"

"वह हर इरात (रात्रि) को रास्ते पर ही टट्टी करती है। दिन में जाना हो तो तभी नाले में जाती है।"

"यह तो अच्छी दिल्लगी रही। लोगों के चलने के लिए जो रास्ता बना है, वहाँ जाकर पाखाना करना भी खूब है। क्या इस गाँव के सब लोग आम रास्ते पर ही..."

कुंञुपात्तुम्मा ने कहा : "हाँ।"

"घर में ही पाख़ाना क्यों नहीं बनाते ?"

कुंञुपात्तुम्मा खामोश थी।

आयिशा ने कहा : "और इरात न कहना, रात्रि कहना।"

कुंञुपात्तुम्मा ने कहा : "रास्तिरि।"

"रास्तिरि नहीं, 'त्रिट्टोष' की तरह 'त्रि' कहो, रात्रि !"

रात्रि का उच्चारण ठीक करने के बाद कुंञुपात्तुम्मा ने पूछा : "तुम्हारे का गर कहाँ ?"

"तुम्हारा घर कहाँ है पूछो। समझीं ? अच्छा मान लो यह सवाल पूछ ही लिया तुमने, तो इसका जवाब क्या होगा ? सच-सच कहना पड़ेगा कि नहीं ? हमारा कोई अपना घर तो है नहीं। मगर शहर में एक घर है भी। वह घर किसी ने हमारे पास गिरवी रखा है। वहाँ हमने तरह-तरह के पेड़ लगाये हैं। वहाँ कई किस्म के कलमी आम, अमरूद, चम्पा, बेला, गुलाब वग़ैरा फल-फूलदार पेड़-पौधे हैं।"

इसके बाद घर का वर्णन शुरू हुआ। खपरैल का दुमंजिला मकान। चारों तरफ़ पीले रंग से पुती चारदीवारी। गेट नीले रंग का। हर कमरे में बिजली के कुमकुमे। और फिर रेडियो...

"वह क्या चीज़ है ?" कुंजुपात्तुम्मा ने पूछा। बाकी सब तो वह समझ गई। दबाने पर जलने वाले 'इलट्रिक' (इलैक्ट्रिक) के दिये उसने देखे हैं। मगर यह रेडियो किस चिड़िया का नाम है, वह समझ नहीं पाई।

आयिशा ने कहा : "वह एक संदूक है। उसमें से गाने और खबरें सुनाई पड़ती हैं।"

"मक्का की भी खबरें सुनाई पड़ेंगी ?"

"अरब, तुर्की, अफगानिस्तान, रूस, अफ्रीका, मद्रास, जर्मनी, अमरीका, सिंगापुर, दिल्ली, कराची, लाहौर, मैसूर, बरतानिया, आस्ट्रेलिया, कलकत्ता, सीलोन—गरज दुनिया-भर के मुल्कों की खबरें इसमें सुनाई देती हैं।"

कुंजुपात्तुम्मा इस लम्बे बयान के बाद भी ठीक-ठीक समझ न पाई कि आखिर यह है क्या बला। कुछ भी हो, इस लड़की की अकड़ तो देखो। हद हो गई। उसने पूछा : "अच्छा यह तो बताओ, तुम्हारे यहाँ इमली का पेड़ भी है ?"

"नहीं तो।"

"अगर इमली का पेड़ न हो तो फिर वहाँ रखा ही क्या है ?" कुंजुपात्तुम्मा ने पूछा : "बुद्धू कहीं की ! तुम्हारे यहाँ कोई हाथी भी था ?"

"नहीं तो।"

कुंजुपात्तुम्मा फ़ख्र के साथ बोली : "मेरे दादा के एक हाथी था, बड़ा-सा एक मस्त हाथी !"

आयिशा ने कहा : "मेरे दादा के एक बैलगाड़ी थी। उस पर वह किराये पर सामान लादकर ले जाया करते थे। इस तरह उन्होंने मेरे बाप को एम. ए. तक पढ़ाया।...अच्छा, अब यह तो बताओ कि आखिर तुम्हारे उस बड़े हाथी का हुआ क्या ?"

"वह तो मर—नहीं नहीं, गुज़र गया।"

'मुसलमान का हाथी था न ? सो उसके मरने पर कहना चाहिए—मौत हो गई या गुज़र गया। मुसलमान के इन्तकाल पर मौत हो गई और काफ़िर के इन्तकाल पर मर गया कहना चाहिए।'

आयिशा ने पूछा : "क्या कहा, वह मर गया ?"

"मौत हो गई। उसने चार काफ़िरों का सफाया कर दिया था।"

"महज चार काफ़िरों का ? और मुसलमानों में कितनों का ?"

"किसी का भी नहीं। क्योंकि वह असली हाथी था।"

"अगर यह बात सच्ची हो तो—" आयिशा ने हँसते हुए कहा।

"स्वर्ग में उस हाथी को पत्थरों, मोतियों और माणिक्यों के बने महल मिल जायेंगे।"

"क्योंकि जो इस दुनिया में सवाब करता है उसे उस दुनिया में आराम-आसाइश मिल जाते हैं। कहा जाता है कि काफ़िरों का हलाल भी सवाब है।"

कुंञुपात्तुम्मा ने कहा : "हमारे पास काफ़ी ज़मीन-जायदाद थी।"

"तो वह सब गई कहाँ ?"

"गई।" बस इतना ही वह जानती थी।

आयिशा ने पूछा : "बाप क्या कर रहा है ?"

"व्यापार।"

"किसका व्यापार ?"

"कुछ इधर-उधर की चीज़ों का।"

"बाप का नाम क्या है ?"

"वट्टनटिमा।"

"और माँ का ?"

"कुंञुताच्चुम्मा।"

आयिशा ने कहा : "मेरे बाप कालेज में प्रोफ़ेसर हैं। नाम है ज़ैनुल आबदीन। माँ का नाम हाजिराबीबी। इक्काका का नाम निसार अहमद। वह शायर हैं, कविता लिखते हैं, इसी दुनिया में रहते हुए। पेड़, फूल, फल, कन्द-मूल उनकी कविता बन जाते हैं।" आयिशा को निसार अहमद के बारे में बहुत-कुछ कहना था। उसने आगे कहा : "वह इस धरती को, और इस धरती पर जो कुछ है और पैदा हो सकता है, उस सबको प्यार करते हैं। बड़े ही साफ़ और नेक...बड़े ही ख़तरनाक आदमी...!"

कुंञुपात्तुम्मा को इन बातों में कोई मज़ा न आया। खासकर ज़ैनुल आबदीन, निसार अहमद आदि नाम उसने सुने न थे। मक्कार, अटिमा, अन्तु, कुट्टि, कुट्टियालि, बावा, कुंञालु, पक्करुकुंञी, मैतीन, अवरान, बीरान आदि नाम तो अलबत्ता उसने सुने थे, मगर निसार अहमद...लाल-लाल खूनी और उभरी आँखें, मरोड़ी हुई नुकीली मूँछ, छाती-भर काले घने बाल, मोटी गर्दन। भारी-भरकम बदन—

ऐसे एक भयानक आदमी की उसने दिल-ही-दिल में कल्पना की। पूछा : "तुट्टाप्पी का इक्काका कब आने वाला है ?"

"कल या परसों। और हाँ, एक बात अपनी उम्मा से जाकर ज़रूर कह देना कि हमारी नाक के नीचे बैठकर इस तरह टट्टी न करें। वर्ना जब इक्काका आयँगे, तो नाहक बखेड़ा उठ खड़ा होगा। कहे देती हूँ।"

कुंञुपात्तुम्मा चौंक उठी कि उम्मा से यह कैसे कहे। और कहे बिना दूसरा चारा भी नहीं। वह मन-ही-मन दुआ माँगने लगी—'या आल्लाह ! तुट्टाप्पी के इक्काका को इधर न आने देना। आ गया तो बखेड़ा खड़ा होकर रहेगा।'

वह भयानक आदमी...!

आयिशा ने पूछा : "तुम्हारा विवाह हो गया ?"

"नहीं, और तुट्टाप्पी का ?"

"बुद्धू ! लुट्टाप्पी कहो। मेरा विवाह नहीं हुआ। बी. ए. पास करने के बाद करूँगी। सो भी अपने इक्काका के विवाह के बाद। उन हज़रत के लायक लड़की अब तक मिली नहीं। कई लड़कियों के बापों से बातचीत चली। मगर मेरे इक्काका सफाई-सुथराई का बड़ा खयाल रखते हैं। लड़की की ही नहीं, घर की भी सफाई पर उनका ध्यान जाता है। एक बी. ए. पास लड़की के यहाँ, जिसके साथ उनकी शादी की बातचीत चल रही थी, एक बार वह गये। जिस गिलास में पीने का पानी उन्हें दिया गया उसमें से मछली की बू आ रही थी, नतीजा यह हुआ कि शादी की चर्चा वहीं रुक गई।"

कुंञुपात्तुम्मा ने पूछा : "तुट्टाप्पी के इक्काका मछली नहीं खाते ?"

"वह अक्सर फलाहार ही करते हैं। गोश्त और मछली कभी-

कभी खा तो लेते हैं, मगर तुरन्त बाद साबुन से हाथ-पैर धो लेते हैं। भाई का हुक्म है कि मछली-गोश्त की बुरी बास घर में कभी न आने पाये। इतना ही नहीं, जिस लड़की से वह शादी करेंगे उसमें वह चाहते हैं कि चन्द फन जरूर हों, जैसे यह कि दाढ़ी बनाना खूब आता हो, चित्र खींचना, नाचना, गाना जानती हो, साहित्य से दिलचस्पी रखती हो, विरियाणी, रोटी, मांस, सांबार (इमली की तरकारी), ओलन (कुम्हड़े की तरकारी), अवियल (जिसमें सब तरह की तरकारी मिलती है), कालन (मट्ठे की तरकारी) मेलुक्कुपुरट्टि (नारियल के तेल में तली तरकारी) आदि दुनिया-भर के सब तरह के खाने-पीने के सामान बनाने में माहिर हो। अलावा इसके मिट्टी खोदना, निराना-गोड़ना, पेड़-पौधों के लिए खाद तैयार करना, सब जानती हो। माँ-बाप ने भी इस तरह की किसी एक लड़की से शादी करने की इजाज़त उन्हें दे दी है।"

इतना सुनना था कि कुंजुपात्तुम्मा की खयाली दुनिया में निसार अहमद की सूरत और भी खौफ़नाक हो उठी। उसे उस पर भारी गुस्सा आया। आयिशा से वह नाराज थी—'कहती है कि इक्काका ने यह कहा, इक्काका ने वह कहा। बड़ा आया है इक्काका का बच्चा।'

आयिशा ने कहना जारी रखा: "मेरे इक्काका—जैसे एक शक्स को...एक दिन का जिक्र है कि रात को इक्काका आराम-कुरसी पर लेटे कुछ पढ़ रहे थे। उनका हाथ मेज की दराज पर था। मैंने यह न देखा, ज़ोर से दराज़ को बन्द कर दिया। लगा कि दराज़ के बीच कोई चीज़ कचक गई है। देखा तो मुझे बेहोशी आ गई। इक्काका के बाएँ हाथ की एक अँगुली दराज़ के बीच पिस-सी गई थी।"

कुंजुपात्तुम्मा चौंक पड़ी। उसका चेहरा उतर गया। पूछा: "फिर?"

आयिशा ने कहा: "इक्काका टस से मस न हुए। उन्होंने मुझसे कहा: 'मूँछ काटने वाली वह कैंची ज़रा ले आओ।' मैं ले आई। इक्काका ने कैंची से वह उंगली काट डाली।"

आयिशा थोड़ी देर चुप रही, फिर बोली: "अच्छा तो मैं अब जाती हूँ। तुम हमारे यहाँ आओगी न?"

कुंजुपात्तुम्मा ने सवाल नहीं सुना। वह सन्न-सी खड़ी थी।

आयिशा ने फिर पूछा: "आओगी न?"

"कहाँ?"

"बुद्धू कहीं की! जहाँ मैं रहती हूँ वहाँ, और कहाँ?"

"मैं उम्मा से इजाज़त लेकर आती हूँ।"

वह घर जाकर उम्मा से बोली: "उम्मा, वहाँ पड़ोस में जो रहते हैं वे मुसलमान हैं। मैं ज़रा उनके यहां हो आऊँ?"

"चल हट, हरामज़ादी!" उम्मा ने कहा: "कहने लगी मुसलमान हैं। वे सब काफ़िर हैं।"

"नहीं उम्मा, मुसलमान हैं। देखो आयिशा इमली के पेड़ के नीचे खड़ी है।"

उम्मा ने उठकर देखा कि इमली के नीचे एक साड़ीपोश लड़की खड़ी है। कानों के ऊपरी भाग को छेदा नहीं। उम्मा ने कहा: "या मय्याद्दीने! बदरींडले![1] कहती है कि वे भी मुसलमान हैं।"

"सचमुच ही उम्मा! ज़रा धीरे से बोलो न! हो आऊँ?"

"तू अगर हमारे घर के अहाते से बाहर भी गई तो समझना मेरी बेटी नहीं। ज़िगर पर बाँध रखना, हाँ।"

कुंजुपात्तुम्मा आयिशा के पास जाकर बोली: "मैं अब नहीं, कल आऊँगी।"

---

१. विस्मयादि बोधक संबोधन।

"अभी क्यों नहीं आती ?"

"थोड़ा काम है। पानी भरना है। कल जरूर आऊँगी और इमली का फल भी साथ लाऊँगी।"

आयिशा चली गई।

उस रात काफी देर तक कुंञ्ञुपात्तुम्मा को नींद न आई। थोड़ी देर पहले ही तो उसने अल्लाह से दुआ माँगी थी कि वह आयिशा के इक्काका को यहाँ आने न दे। अब उल्टा कैसे माँगे ? आखिर उसने आरजू की : "या खुदा ! तुट्टाप्पी के इक्काका...!"

८

झूठी गवाही नहीं दूंगी

उम्मा ने फैसलाकुन अन्दाज़ में कहा : "वे मुसलमान हरगिज़ नहीं। मैं आनामक्कार की लाड़ली बेटी कह रही हूँ। हाँ, वे मुसलमान हर्गिज़ नहीं।"

कुंञ्ञुपात्तुम्मा ने बाप्पा की ओर देखा। बाप्पा ने चुप्पी साध ली।

उम्मा ने फिर कहा : "क़यामत होने वाली है। उसी के लच्छन हैं ये सब।"

संसार का जल्द ही अन्त होगा और आयिशा तथा उसके माँ-बाप का रंग-ढंग इसी की ओर इशारा करता है !

"उस हौवाज़ाद ने बालों में फूल गूँथ रखा है। थू-थू !"

आयिशा की माँ जूड़े में फूल गूँथा करती थी। क्या यह इस्लाम के खिलाफ़ नहीं ?

"और उस छोकरी की सूरत तो देखो। बाल काढ़कर दो पूँछें-सी कंधों से छाती पर लटका रखी हैं।"

आयिशा अपने बालों से तरह-तरह की कसरत कराया करती थी। बड़ी सनकी थी वह। कभी दौड़ती तो कभी कूदती, कभी नाचती तो कभी गाती। एक दिन कुईं वाले पोखर के पास खड़े-खड़े आँखें बन्द करके उसने बड़े ध्यान से एक गाना गाया। कुंजुपात्तुम्मा ने सोचा कि इबादत कर रही है। फिर खयाल आया कि नहीं, यह कोई 'बैत' होगी, या 'कस' का गीत। उसका एक लफ़्ज भी उसकी समझ में न आया। नतीजा यह हुआ कि वह भी दोनों हाथ पसारकर आमीन की मुद्रा में खड़ी हो गई। गाना खत्म हुआ तो कहा : 'आमीन !' आयिशा हँसी नहीं। खाँसी की-सी कुछ आवाज़ उसके मुँह से निकली। वह हँसी रोक रही थी, यह बात बाद को ही कुंजुपात्तुम्मा समझ पाई। उसने पूछा : "क्यों, क्या बात है ?"

आयिशा ने कहा : "कुछ मत पूछो। मैं निरी अनजान हूँ। जब वह हज़रत तशरीफ लायें तो उन्हीं से पूछ लेना। वही इस गीत के बनाने वाले हैं। कोई नहीं जानता कि भाषा इसकी क्या है। हमारे कालेज की लड़कियों के जुलूस में गाने के लिए उन्होंने यह गीत रचा था।"

"तुट्टाप्पी जब गीत गा रही थी, तो मैंने आमीन पकड़ा था।"

"हाँ, मैंने देखा भी था।"

"आमीन कहने से पाप लगेगा क्या ?"

"बुद्धू कहीं की ! पाप क्या लगेगा, पुण्य ही होगा।"

"तो एक बार फिर गाओ न ! बड़ा अच्छा लगा मुझे।"

"तो भक्ति के साथ सुन लो ! दिल से सब खयालों को भगा दो और ध्यान इधर लगाओ। मान लो कि लड़कियाँ झंडियाँ फहराती हुई कदम मिलाकर जुलूस में चल रही हैं और गा रही हैं।"

"मान लिया।"

"अच्छा तो सुनो !

आयिशा गाने लगी :

हो ... हो ... हो !
हुत्तिनि हालिट्टा लित्ताप्पो
संचिनी बालिक्का लुट्टाप्पी
हालित्ता माणिक्का लिंचल्लो
संकर बाहना तूलीपी
हुंचिनि हीलोत्त हुत्तालो
हानत्त लक्किटि जिंबालो
हा ... हा ... हा ...!
हो ... हो ... हो ...!

"गीत की पंक्तियाँ सही हैं या नहीं, मुझे नहीं मालूम। कुछ शब्द छूट गये होंगे, ऐसा लगता है। ऐसी हालत में वह मुझे जान से मार डालेंगे।"

कुंजुपात्तुम्मा ने पूछा : "तुट्टाप्पी का इक्काका यह सब कैसे जानेगा ?"

"पूछती हो कैसे जानेगा ? वाह री ! वह आते ही मुझे बुलायँगे—'लुट्टाप्पी ! आओ इधर, इस घेरे के अन्दर खड़ी हो जाओ।' मैं घेरे में खड़ी हो जाऊँगी तो वह कहेंगे—'अच्छा, अब गाओ।' और नहीं गाऊँगी तो वह मुझे हलाल कर देंगे और दो हज़ार टुकड़े कर देंगे। और उन दो हज़ार टुकड़ों को दो हज़ार चिड़ियों को चुगा देंगे, उसके बाद उन चिड़ियों को गोली से उड़ा देंगे और सबको भूनकर खा जायँगे।"

"हलाल करके खाते हैं कि नहीं ? बिस्मिल्लाह पढ़कर हलाल करके ही मुसलमान जानवरों का गोश्त खा सकता है।"

"बुद्धू कहीं की !" आयिशा ने कहा, "मेरे-जैसी शरीफ़ लड़की का खून करने पर जो कुछ किया जा सकता है, मैं उसीके

बारे में कह रही थी। मसहफ़ की चोरी करने वाले को वज़ू की क्या ज़रूरत ? कुरान की जो चोरी करता है उसे बाहरी सफाई से क्या सरोकार ?"

आयिशा अक्सर ऐसी ही बातें किया करती। कभी-कभी वह अखबार उठा लाती और इधर-उधर की अजीबो-गरीब खबरें कुंजुपात्तुम्मा को पढ़कर सुनाती।

कुंजुपात्तुम्मा इस अन्दाज़ से खड़ी होकर अख़बार सुनती कि जैसे उसे यक़ीन ही न हो कि इस कागज़ पर असल में ऐसे खौफ़नाक वाक़यात का ज़िक्र है। आयिशा जिस काग़ज के कोने पर कोई खबर छपी हो उस पर उँगली रखकर एक बार और पढ़कर सुनाती। कुंजुपात्तुम्मा सुनकर अचरज में आ जाती। और इस अचरज को वह छिपाने की कोशिश भी नहीं करती।

एक दिन आयिशा ने पूछा : "तुम्हारे पढ़ने-लिखने का इन्तज़ाम क्यों नहीं किया गया ? रुपये-पैसे की कमी तो न थी।"

'ठीक ही तो है। पैसे की कमी न थी। किसी बात की तंगी न थी। उन्हीं दिनों अगर पढ़ाई-लिखाई का इन्तज़ाम हो गया होता तो आज कुंजुपात्तुम्मा भी आयिशा की ही तरह समझदार बन चुकी होती।...उसकी जिन्दगी का नक्शा ही बदल गया होता। बाप्पा-उम्मा ने ऐसा क्यों न किया ?'

उस रात कुंजुपात्तुम्मा ने इस मसले पर फिर ग़ौर किया कि उसे माँ-बाप ने पढ़ाया-लिखाया क्यों नहीं ? चटाई पर लेटते हुए उसने अँधेरे में बाप्पा से पूछा : "क्यों बाप्पा ? मुझे तुमने पढ़ाया-लिखाया क्यों नहीं ?"

बाप्पा ने ठंडी आह भर ली, कुछ कहा नहीं। उम्मा ने कहा : "पढ़ा-लिखाकर तुझे काफ़िर क्यों न बनाया, यही जानना चाहती है न तू ?"

'पढ़ना-लिखना आ जाय...कुछ इल्म हासिल हो जाय...तो फिर मुसलमान बनकर जीना दुश्वार हो जाय। क्या यह दलील सही है ?' दूसरे दिन कुंजुपात्तुम्मा ने अपना यह संदेह आयिशा के सामने प्रकट किया। आयिशा हँस पड़ी। नासमझी की हद हो गई।... समझदारी की तरह नासमझी भी बढ़ावा पाकर फैलने लगती है। बढ़ावा देने पर हर चीज़ फैलेगी ही, चाहे वह काम की हो, चाहे बेकार। आयिशा ने कहा : "देखो, मुसलमानों को समझदार बनना चाहिए। नासमझ हमकीन होते हैं। क्या इस्लाम हुमुक है ?"

'क्या इस्लाम नासमझ गधा है ?' कुंजुपात्तुम्मा में इतनी अक्ल तो है और वह जानती है कि इस सवाल का जवाब है—'नहीं।' तो भी...उसने पूछा : "काफ़िरों से मुखालिफ़त करनी है कि नहीं ?"

"हाँ, काफ़िरों से दुश्मनी बरतनी चाहिए, ठीक है।" आयिशा ने कहा : "जब काफ़िर पैरों से चलेंगे तो मुसलमानों को सिर के बल चलना चाहिए। काफ़िर दाँत साफ करते हैं और नहाते हैं। सो मुसलमानों को चाहिए कि न तो दाँत साफ करें, और न गुसल करें। काफ़िर मुँह से खाते हैं तो मुसलमानों...।"

"चलो, हटो तुट्टाप्पी !" कुंजुपात्तुम्मा उलाहना देती हुई बोली, "तुम तो मज़ाक उड़ाने लगीं न !"

"अरी बुद्धू ! अल्लाह और नबी के अदल में मुखालिफ़त-इखालिफ़त कुछ नहीं। नेक रहो, पाक रहो, तन्दुरुस्त रहो। ज़िंदगी की सुन्दरता का खयाल रखो। दूसरों को दुःख न दो, ईमानदार बनो। अल्लाह पर यक़ीन लाओ। नबी पर यक़ीन लाओ।...ये और ऐसी कितनी ही बातें हैं। इन पर अमल करने वाले ही तो असली मुसलमान होते हैं। इतने पर भी तुझ बुद्धू के शक़ दूर न हों तो जब इक्काका आयें, तो पूछ लेना उन्हीं से।"

लेकिन निसार अहमद के आते ही बाप्पा ने उसका गला काटने के लिए दाव उठाया। इस सारे हंगामे का कारण उम्मा थी।

बात यों हुई—

निसार अहमद जब आया था, तो उसके साथ एक बड़ा भारी जंगल भी लाया गया था। कहाँ-कहाँ से यह सब तोड़ लाया गया, कुंजुपात्तुम्मा समझ न सकी। ज्यादातर फलदार पेड़ों के पौधे थे और कुछ नारियल के पौधे भी। वह परती ज़मीन एक ही दिन में बगीचा बन गई। करीने से पेड़-पौधे एक ही फासले पर लगाये गए।

उस दिन वहाँ काफी दौड़-धूप मची रही थी। निसार अहमद, उसके बाप्पा और आयिशा को उस दोपहर के वक्त मेहनत करते देखकर कुंजुपात्तुम्मा चकित रह गई।

"ज़रा आकर देखो न," उम्मा को बुलाकर उसने कहा। उम्मा खड़ाऊँ पर सवार, 'टप-टप' करती ड्योढ़ी पर आई—"अव्वल दरजे के पागल हो गए हैं सब, और क्या !"

इस टिप्पणी के बाद वह अन्दर चली गई। लेकिन कुंजुपात्तुम्मा को ऐसा नहीं लगा कि उन सबके सिर पर पागलपन सवार है, उलटे उसका आश्चर्य बढ़ता ही गया। धरती पर काम करने वाले मुसलमानों को उसने पहले कभी नहीं देखा था। उसका विश्वास था कि तिजारत ही एक ऐसा पेशा है जो मुसलमानों के हक़ में है। ज़मीन पर खुरपी-कुदाल से काम करना—यह सब काम मज़दूर कर देंगे। मुसलमानों को यह सारा काम खुद करते...वह पहली बार देख रही थी।

उसका मन कसक उठा। कारण कि जिस ज़मीन पर कुंजुपात्तुम्मा का घर था वह 'भिन-भिन' कर रही थी। उस पर काम करने वाला कोई नहीं था। जगह की कमी नहीं थी, जहाँ पेड़-पौधे लगाये जा सकें। काश ! उसका भी कोई भाई होता। मगर इस मामले में अब किया ही क्या जा सकता था ?

निसार अहमद के आने के उपलक्ष्य में कुंजुपात्तुम्मा ने कुछ तैयारियाँ कर रखी थीं। उसने हाते में पड़े सूखे पत्ते बुहारकर आग में जला दिये थे। रसोईघर के सामने पड़ी मछली की चोई दूर फेंक दी थीं। झाड़ू लगाकर घर साफ कर दिया था। आँगन में पड़े चिथड़े हटा दिये थे। कुंजुपात्तुम्मा ने खुद अपने को भी खूब सजाया-सँवारा था। यह सब देखकर उम्मा ने पूछा : "तुझे यह क्या हो गया है री !"

"हाथ का घाव भर गया ?" मिलते ही निसार अहमद का पहला सवाल था।

"जी हाँ !" कुंजुपात्तुम्मा ने उत्तर दिया। उसके अचरज की सीमा न रही कि इतने दिनों के बाद भी निसार अहमद को यह घटना याद है। उस वक्त उसे हद दर्जे की घबराहट व सकपकाहट महसूस हुई। कब की बात है वह, निसार अहमद के दुबारा आने से पहले की या पीछे की, यह तो वह नहीं कह सकती थी। इसलिए निसार अहमद ने 'कब' कहा था, यह भी उसे याद नहीं। मगर इतना तो उसे अच्छी तरह याद है कि उसने क्या कहा था और क्या किया था।

निसार अहमद ने बारह फुट लम्बा, चार फुट चौड़ा और कमर तक गहरा एक गढ्ढा खोदकर घर के पास एक पाखाना बनाया। बाप्पा इसमें निसार अहमद की मदद न कर सका, क्योंकि वह बिलकुल नहीं जानता था कि गड्ढा कैसे खोदा जाता है। गड्ढा हाते के एक कोने पर बनाया जा रहा था। इसलिए बाप्पा और निसार-अहमद के बीच जो बातें हुईं उन्हें कुंजुपात्तुम्मा सुन न सकी। निसार अहमद धूप में खड़ा पसीने से तर-बतर काम कर रहा था कि बाप्पा आकर कहने लगा : "बेटी, थोड़ा पानी ले आना, वह पानी पियेगा !"

कुंजुपात्तुम्मा अन्दर गई। एक छोटी-सी साबुन की टिकिया से दो बर्तन अच्छी तरह माँजे। सूँघकर देखा कि बदबू तो नहीं है। नहीं, ठीक है। उसने पानी लाकर बाप्पा को दिया। बाप्पा ने जब पानी का बर्तन निसार अहमद को दिया तो उनकी आँखें बचाकर उसने पहले बर्तन को सूँघा, तब पानी पिया। कुंजुपात्तुम्मा कसम खाकर कहने को तैयार है कि निसार अहमद ने ऐसा किया था।

पाखाना बन गया तो कुंजुपात्तुम्मा देखने गई। एक छोटे-से घेरे के अन्दर एक गड्ढा, उस पर दो खुड्डियाँ। एक कोने पर मिट्टी का अंबार लगा था। उस पर नारियल का एक छिलका। "टट्टी जाने के बाद ऊपर मिट्टी डालनी चाहिए," आयिशा ने कहा, "धीरे-धीरे यह गड्ढा भर जायगा तो एक और बनाया जायगा।"

"यह हमें पहले नहीं सूझा।" बाप्पा बोला : "अगर हर घर में ऐसी व्यवस्था होती तो रास्ते चलते बदबू से दिमाग़ फट जाने की नौबत न आती।"

इस घटना के बाद बाप्पा के साथ निसार अहमद खूब हिल-मिल गया। साथ ही बाप्पा के सन्देह बढ़े। सैकड़ों सवाल वह निसार-अहमद से पूछता : "क़यामत आने वाली है क्या, और लोग इतने ज़ालिम व घमंडी क्यों बनते जा रहे हैं, और..."

निसार अहमद कहता : "कौन जाने ? इतना तो हम सब जानते हैं कि जो जनम लेता है, उसकी मौत जरूर होती है। मैं भी मर जाऊँगा, आप भी मर जायँगे। सबका यही हाल है। हो सकता है कि इसी तरह दुनिया का भी अन्त हो जाय। इससे क्या ? जब होगा तब देखा जायगा। तब तक खुशियाँ मनाते हुए जीना चाहिए। विवेक की कमी के कारण ही लोग ज़ालिम व घमंडी बनते जा रहे हैं। ज़रूरत है सही रास्ता बताने वाले रहनुमाओं की। फिर, दूसरों को बुरा कहकर उनकी उपेक्षा करने की बजाय उनको सुधारने की कोशिश करनी चाहिए।"

बाप्पा के मन में यह सुनकर एक और शक जाग उठा : "क्या काले नाग को सुधारा जा सकता है ?"

"क्यों ?"

"काले नाग-जैसे विषैले आदमी होते हैं न। सियार, बाघ और बन्दर—इन तीनों की आदतें एक ही शख्स में मैंने देखी हैं।"

"उन सबको पालतू बनाकर आदमी उँगली के इशारे पर नचाता भी है कि नहीं ?"

"मगर तो भी—"

दोनों चुपचाप सोचने लगते। एक बार उम्मा ने पूछा : "अयम्मते ! वह जंगल क्यों लगाया जा रहा है ?"

दरवाजे की आड़ में खड़ी कुंजुपात्तुम्मा ने मन-ही-मन कहा—'अयम्मत नहीं, निसार अहमद ! वही नाम है !'

निसार अहमद ने कहा : "वह सब जंगल नहां है, दो-तीन साल के अन्दर ही आप लोगों को अच्छे किस्म के आम, अमरूद, अनार, सब मिलने लगेंगे।"

उम्मा ने पूछा : "अयम्मत की उम्मा हमारे यहाँ क्यों नहीं आती ?"

आयिशा ने कहा : "उस दिन के हंगामे के बाद माँ को तो डर..."

सब हँस पड़े।

निसार अहमद के आने के दूसरे दिन की बात थी शायद। उसके आने की खबर सुनी तो कुंजुपात्तुम्मा को डर लगा, साथ ही खुशी भी हुई। पहले से ही दिल में जो दर्द-सा हो रहा था, वह और भी बढ़ गया। खाने से दिलचस्पी कम होने लगी। कमज़ोर होती गई। ऐसी ही हालत में वह घटना घटी।

निसार अहमद और आयिशा पेड़ों को पानी दे रहे थे।

कुंजुपात्तुम्मा आँगन में उगी घास उखाड़ फेंकने के बहाने बैठी उन्हें ध्यान से देख रही थी। कितने बजे होंगे, इसका पता कुंजुपात्तुम्मा को न था। सूरज इमली के पेड़ के ऊपर तक पहुंच गया था। हस्बदस्तूर उम्मा नाले से निकल आई।

निसार अहमद ने पुकारकर कहा : "जी ! ज़रा सुनिए तो।"

उम्मा पर भूत सवार हो गया। वह तुनककर खड़ी हो गई।

निसार अहमद ने उसे समझाया कि उनके सामने पाखाना करने बैठना बजा नहीं।

उम्मा ने पूछा : "पता है तुम किससे बातें कर रहे हो ?"

कुंजुपात्तुम्मा ने ज़ोर से कहा : "उम्मा ! चुपके से चली आओ न !"

उम्मा ने निसार अहमद से पूछा : "तुमको क्या चाहिए ?"

निसार अहमद हँसा।

उम्मा मारे गुस्से के काँपने लगी। कहा : "शरम नहीं आती ? औरतों को शान दिखा रहा है ?"

बाप्पा आया तो उम्मा ने कहा : "नाकों दम है ! या मय्यद्दीने। नाकों दम है..."

"क्यों, बात क्या है ?"

"उचक-उचककर देखने आया था न—जब मैं उस नाले में बैठी। आड़ में लुक-छिपकर, झाँक-झाँककर देखने लगा।...या मय्यद्दीने ! चैन से न रहने देगा मुझे।"

"कौन ?" बाप्पा की आँखें लाल हो गईं।

उम्मा ने कहा : "वही।"

"वही कौन ?" बाप्पा दाव (गँड़ास) लेकर बाहर निकल पड़ा—"उसका गला धड़ से अलग कर दूँगा। बता तो कौन है ?"

"पड़ोस का वही छोकरा—" उम्मा पूरा भी न कह पाई

कि 'अस्लाम अलैकुम्' कहते हुए निसार अहमद ने आँगन में कदम रखा।

बाप्पा ने उसके बनाये हुए बाल और सामने दाहिनी तरफ़ कुछ खोंसकर पहनी लुंगी को घूरकर देखा और रुखाई के साथ सलाम दिया : "वा अलैकुमुस्सलाम्।"

निसार अहमद ने कहा : "हम लोग आपके पड़ोसी हैं। बाप, उम्मा, बहन और मैं—"

"तुम लोग मुसलमान हो ?"

"हाँ।"

"कहाँ के मुसलमान ?"

"मज़हब के बारे में हम फिर कभी बहस करेंगे। हम कोई भी हों। मान लीजिए हम हिन्दू हैं, या ईसाई ही समझ लीजिए। मज़हब के कोई भी हों, हाँ हमारी नाक के नीचे बैठकर..."

"बैठ ही गई तो क्या आड़ से देखोगे ?"

"बाप्पा !" कुंजुपात्तुम्मा ने भीतर से आवाज़ दी।

"क्या है बेटी ?" बाप्पा ने पूछा।

"उम्मा ने जो कुछ कहा है वह सब..."

इतने में ही उम्मा ने उसका मुँह बन्द कर दिया।

"हरामजादी ! तू अपनी आन रख ! मैं तेरी माँ हूँ, हाँ। आनामक्कार की लाड़ली बेटी..."

कुंजुपात्तुम्मा ने झटका देकर माँ का हाथ मुँह से हटाया।

"उम्मा झूठ बोल रही है।" उसने दृढ़ स्वर में कहा।

"या मय्यदीने ! यह हरामजादी मेरी ही कोख से पैदा हुई ?"

"क्या है बेटी ?" बाप्पा अन्दर आया।

"मैं झूठी गवाही नहीं दे सकती।" कुंजुपात्तुम्मा ने कहा : "उम्मा झूठ बोल रही हैं।"

"कुंञुपात्तुम्मा", उम्मा बोली : "तेरे दादा के एक हाथी था—बड़ा-सा एक मस्त हाथी !"

"फिर भी मैं झूठी गवाही नहीं दूँगी।"

"क्या है बेटी ?" बाप्पा ने पूछा।

कुंञुपात्तुम्मा ने कहा : "उम्मा झूठ बोल रही हैं। वहाँ उस घर के आँगन में खड़े होकर इन्होंने 'जी' कहकर पुकारा और पूछा कि हमारी नाक के नीचे आकर टट्टी करना कहाँ की रीति है ? इसी पर उम्मा नाराज हो गईं। बस, इतना ही हुआ।"

उम्मा ने कहा : "हाय, मेरा कोई नहीं !"

"कुंञुपात्तुम्मा ! खबरदार ! तेरी बोटी-बोटी चुन लूँगा मैं, हाँ !"

"मुझे मार डालो, गला काट लो ! मय्यद्दीने ! बदरीङ्ले ! गला काट लो। हाय, मेरा कोई नहीं।"

उम्मा चीखती-चिल्लाती फर्श पर बैठ गई। बाप्पा बाहर गया और निसार अहमद से नरम होकर बोला : "हम गरीब बेज़ार हैं। अब क्या हो।"

निसार अहमद ने कहा : "वैसे तो हम भी गरीब हैं, बेज़ार हैं। हमारी अपनी कोई ज़मीन-जायदाद नहीं। शहर में किराये के मकान में रहते हैं। अब हमने यह घर खरीद लिया है। मुझे खेती से दिलचस्पी है।"

बाप्पा ने कहा : "हमारा यह घर और ज़मीन हमारा अपना है। फिर भी हमको कोई रास्ता नहीं दीखता। देखो यहाँ हमारे हाते में कोई आड़ नहीं, पर्दा नहीं। इस गाँव के ज्यादातर लोग साँझ के बाद ही पाखाना जाते हैं। आम रास्ते पर मेरी बीवी-बेटी का टट्टी जाना जरा...। क्योंकि हम कुछ अच्छी हैसियत के लोग थे। जो पहले हमको देखकर अदब से उठते थे, वे ही आज हमें

देखकर आँखें भींच लेते हैं। उनके बीच में आम रास्ते पर मेरी बीवी-बेटी का टट्टी बैठना कहाँ तक बजा है ?"

निसार अहमद ने कहा : "लेकिन आम रास्ता लोगों के पेशाब-पाखाने के लिए नहीं बना है।"

"तो फिर लोग जायेंगे कहाँ ?"

"इसके लिए चाहिए कि घर पर ही टट्टी-घर तैयार हो। ज्यादा खर्च भी कुछ नहीं होगा। नारियल के पत्तों की सात-आठ चटाइयाँ, पेड़ों की कुछ डालें, रस्सी, और एक कुदाल या "तूंपा"[१] मिल जाय तो बस घंटे-भर में एक साल के लिए मसला हल समझिए। फिर भी लोग ऐसा क्यों नहीं करते ? बड़े-बड़े शहरों की बात अलग है, क्योंकि वहाँ जगह की कमी है, मगर यहाँ तो यह बात नहीं। सुन्दर गाँव, काफी जगह, और साफ पानी वाली एक नदी। मेरा कहा मानेंगे ? कहीं से कुछ नारियल की चटाइयाँ, रस्सी और लकड़ियाँ ला सकेंगे आप ?"

"वह सब आ जायगा।"

"तो उसके बाद मुझे ज़रा आवाज़ दे लें !"

निसार अहमद वापस चला गया। उसके पीछे नारियल के पत्तों आदि का इन्तजाम करने के लिए बाप्पा भी चला गया तो उम्मा ने कुंञुपात्तुम्मा से कहा : "तू मेरी बेटी नहीं।"

कुंञुपात्तुम्मा चुप।

उम्मा ने कहा : "तुझे मैंने जन्म नहीं दिया।"

कुंञुपात्तुम्मा खामोश।

उम्मा ने कहा : "हरामजादी ! तेरे मुँह में क्या है ?"

कुंञुपात्तुम्मा मौन।

---

१. लंबी मूठ वाला कुदाल, जो केरल के मजदूर खेत के काम में लाते हैं।

उम्मा ने पूछा : "तू मुझ से बोलेगी तो क्या चूड़ियाँ उतर जायँगी ?"

कुंञुपात्तुम्मा ने कहा : "मेरे हाथों में चूड़ियाँ नहीं।"

उम्मा ने पूछा : "तुझे अपनी माँ प्यारी है या वह छोकरा ?"

कुंञुपात्तुम्मा ने कोई जवाब न दिया।

उम्मा बोली : "चेम्मीनटिमा की बहादुरी घास चरने गई थी क्या तब ? देखा नहीं तूने ? उस लौंडे के दो-तीन दफ़ा कानून के बघारते ही चेम्मीनटिमा दुम दबाकर बैठ गया। पत्तों-लकड़ियों की अब क्या जरूरत पड़ी है री ? किसकी कब्र बनेगी ?"

कुंञुपात्तुम्मा ने कुछ न कहा।

उम्मा ने पूछा : "तूने उसके लिए गवाही क्यों दी ?"

कुंञुपात्तुम्मा मौन।

उम्मा ने पूछा : "तू अपनी उम्मा की लाज बचाने क्यों न आई ?"

कुंञुपात्तुम्मा ने कहा : "मैं झूठी गवाही नहीं दे सकती थी।"

"अगर देती तो क्या हर्ज था री ? तेरे गले की माला उतर जाती ?"

"मेरे गले में माला नहीं।"

"तो फिर क्यों नहीं दी ?"

"बाप्पा गँड़ासे से उसका गला काट देते तो...?"

"तो हमारा क्या बिगड़ जाता ?"

"और बाप्पा को पुलिस वाले थाने में ले जाकर धक्कों-मुक्कों से मार डालते तो—?"

उम्मा कुछ पल अवाक् रह गई। फिर कहा : "या अल्लाह ! तूने ठीक ही कहा।"

इसके बाद उम्मा कुंञुपात्तुम्मा के पास जाकर बोली : "मेरी

प्यारी बेटी ! तूने हमारे खानदान को बचाया। बिटिया मेरी ! तू चन्द दिनों से इतनी कमज़ोर क्यों दीखती है ?"

"मेरे दिल में दर्द है, उम्मा !"

"या अल्लाह ! किसी इफ़रीत या जिन की बुरी नज़र तो मेरी बेटी पर नहीं पड़ी।"

९

मेरे दिल में दर्द है

कुंजुपात्तुम्मा को क्या हो गया है, इसका उसे ख़ुद भी पता नहीं था। मसजिद के 'बत्तीब' से बाप्पा ने मंत्र-जपा धागा लाकर बेटी के गले में बाँध दिया। इसके अलावा एक 'मुसलियार'[1] ने एक सूटकेसनुमा ताबीज जो दिया था, उसे भी गले में लटका रखा था। तिस पर भी जो इफ़रीत उस पर चढ़ आया था वह उसे छोड़ नहीं रहा था। एक दिन आयिशा ने आकर कुछ कहा। निसार अहमद ने उससे कहला भेजा था, इसलिए कुंजुपात्तुम्मा बड़े ध्यान से सुनने लगी। मगर आयिशा की बातों से उसे लगा कि वह उसकी हँसी उड़ाने आई है। रूठकर कहा : "चलो, हटो तुट्टाप्पी !"

आयिशा ने कहा : "शैतान का नाना तक भाग जायगा।[2] इफ़रीत बेचारे की क्या हस्ती ? चुपचाप उसे गले पर लटका लो ! इक्काका की वह बड़ी-सी चमड़े की पेटी है न, उसे ले आऊँ क्या ?"

---

१. वाइज, जो जंतर-मंतर का कार्य भी करता है।

कुंजुपात्तुम्मा ने कहा : "चुप ! बुद्धू कहीं की !"

साथ ही उसे रंज भी हुआ।

आयिशा ने गम्भीर होकर पूछा : "तुम्हें हो क्या गया है आखिर ?"

"मेरे दिल में दर्द है।"

जलन नहीं, घुटन—जो बाहर निकने का रास्ता न पाकर अन्दर-ही-अन्दर घुमड़ रही है। चुपचाप बैठ कर रोने की इच्छा होती है—साथ ही हँसने की भी। रोने से ज्यादा वह हँसना पसन्द करती है, जोर से नहीं, कुछ याद करके मंद-मंद मुस्काना। तब फूट-फूटकर रोने की इच्छा होती है। निसार अहमद को देखते ही उसके गालों में सनसनी-सी होने लगती है। छाती भारी होकर फूटना चाहती है। निसार अहमद से उलाहना भरी आवाज़ में वह पूछना चाहती है : 'मेरी तरफ क्यों ताक रहे हो ?' मगर कभी पूछती नहीं। पूछ बैठने पर वह उसकी ओर फिर कभी न देखे तो ? वैसे तो अब तक निसार अहमद ने कुंजुपात्तुम्मा की ओर देखा नहीं, मगर वह चाहती है कि निसार अहमद उसे देखा करे। वह ऐसे स्थान पर जाकर खड़ी रहती, जहाँ से निसार अहमद को वह अच्छी तरह दीख पड़े। और ऐसा करते वक्त वह बहाना ढूँढ़कर अपने-आपको समझाने की चेष्टा करती हुई कहती : 'मैं और किसी के लिए नहीं, मैं तो सूखी लकड़ियाँ चुनने आई हूँ।' कोई-न-कोई हीला करके वह पड़ोस में जाती। या तो आग ले आने के मिस, या फिर नमक माँगने के लिए या आयिशा का नाम लेकर वह वहाँ कितनी ही बार जाती। निसार अहमद ठीक से दीखता न था। या तो वह आँगन साफ करता होता या पेड़ों को पानी देता होता। आँगन में ऐसा रखा ही क्या था कि जब देखो उस पर झुका खड़ा है। आँगन-भर में चाँदी-जैसी सफ़ेद रेत बिछी थी। चारों तरफ़ गमले। और आँगन में काम

न करता हो तो पढ़ने में मगन रहता। क्या खाक पढ़ता होगा—वह खुद पूछती।

एक दिन कुंजुपात्तुम्मा ने देखा कि निसार अहमद एक पेड़ के नीचे लेटा है। छाती पर एक पुस्तक पड़ी है और वह चुपचाप लेटा हुआ है।

कुंजुपात्तुम्मा का मन एक अजीब-सी गरमी से पिघलने लगा। निसार अहमद की आँखें आसमान पर टिकी थीं। पश्चिमी क्षितिज पर रंग-बिरंगे बादल लहरा रहे थे। उड़ने वाली चिड़ियों के पंखों पर शाम की सुर्खी चमक रही थी।

वह बेचैन हो उठी। उसने धुले कपड़े निकाले। यह सफ़ेद कुर्त्ता बहुत दिनों के बाद वह आज पहन रही थी, इसलिए वह गाढ़ा हो गया था और बदन से चिपक-सा गया था। सिर पर महीन 'तट्टम' (सिर ढकने का कपड़ा) लपेटा। इस तरह का साज-सिंगार उसने क्यों किया, उसे खुद मालूम नहीं था। आइने में वह अपनी परछाइ की ओर देर तक निहारती रही। गाल का काला तिल अंजन की बिन्दी की तरह चमक रहा था। चमकीली बड़ी-बड़ी आँखों से उसने अपनी ओर देखा। वह मुस्कराई, उसे रोना आया। फिर वह हँस पड़ी।

चेहरे का भाव छिपाकर वह पड़ोस के घर की तरफ चली। उसका दिल 'टप-टप' तड़प रहा था।

निसार अहमद की नज़र उस पर पड़ी। उस चितवन में खुशी का पुट था।

कुंजुपात्तुम्मा ने आग ली। आयिशा या उसकी माँ से बातचीत करने के लिए वह रुकी नहीं। जल्दी लौट पड़ी।

रास्ते में निसार अहमद ने उसे पुकारा : "सुनो तो !"

कुंजुपात्तुम्मा के दिल में बिजली-सी कौंध गई। वह वहीं

गड़ गई, एक कदम भी आगे न बढ़ सकी। उसे उमस-सी लगी। वह डर गई, घबरा उठी, फिर उसे खुशी महसूस हुई ... इन सभी भावनाओं के साथ उसने निसार अहमद को देखा।

निसार अहमद उठ बैठा।

"मुझे ज़रा आग चाहिए।" कहते हुए आग की लकड़ी उसने कुंजुपात्तुम्मा के हाथ से लेकर एक सिगरेट सुलगाई।

"कुंजुपात्तुम्मा !" निसार अहमद ने कहा : "तुम्हारा वह गौरैया है न, उसने मेरे पास आकर तुम्हारी खैरियत पूछी थी। मैंने कहा—वह आजकल किसी इफ़रीत को भगाने के लिए अपने गले में एक सूटकेस लटकाये घूम रही है।"

"आग दो !"

"कुंजुपात्तुम्मा !"

"जी !"

"तुम्हें क्या हो गया है ?"

"मेरे दिल में दर्द है।"

"दिल का दर्द गले में यह चीज लटकाये घूमने से दूर होगा क्या ?"

"आग दो !"

"तुमने कुछ लिखना-पढ़ना सीखा है ?"

"मुझे किसी ने सिखाया ही नहीं।"

"आयिशा से कहो वह कल से तुम्हें सिखाये। कहोगी न ?"

"तुट्टाप्पी मेरा मज़ाक उड़ायगी।"

"तुट्टाप्पी तुम्हारी हँसी उड़ायगी तो मैं उसके दो हज़ार टुकड़े करके ..."

"नहीं जी ! तुट्टाप्पी को कुछ न कहना। आग दो मुझे !"

"तुट्टाप्पी से मैं कहूँगा, समझी ?"

आखिर किसी तरह उसने निसार अहमद से आग ली। उसने भागना चाहा। मगर धीरे से कदम रखकर चलती गई। उसके सामने दुनिया एक नई रोशनी में नहाकर खड़ी थी। जैसे आज हर चीज़ की दिलफरेबी दुगुनी हो उठी हो। उसे हर एक चीज़ से मुहब्बत होने लगी। एक चींटी ने उसे डस लिया तो दर्द के साथ उसने चींटी से कहा : "तू सबको इसी तरह न काटना जिस तरह मुझे काटा है।"

फिर उसने उस चींटी को चुटकी से लेकर जमीन पर रख दिया।

उसे रात बड़ी ही लुभावनी-सी लगी। उम्मा और बाप्पा खुर्राटे भर रहे थे, मगर उसे नींद न आई। वह निसार अहमद को याद करके मुस्काई। उलाहना देते हुए तकिये पर चुटकी भरी— 'दर्द तो नहीं हुआ ?' सवाल के साथ आँखें भर आईं। अगले पल में मुस्करा पड़ी। हँसी-रुलाई की इसी आँखमिचौनी में पता नहीं उसे कब नींद आ गई।

दूसरे दिन दोपहर के खाने के बाद कुंजुपात्तुम्मा आँगन में खड़ी थी कि इतने में आयिशा हाथ में एक बड़ी छड़ी लिये, बगल में एकाध पुस्तक दाबे, बड़ी शान से आकर उसे बुलाने लगी। उसकी समझ में न आया कि माजरा क्या है। इमली के पेड़ के नीचे ले जाकर आयिशा ने छड़ी से ज़मीन पर एक घेरा बनाया और कहा : "इस घेरे के बीच खड़ी हो जाओ !"

"क्यों, क्या बात है तुट्टाप्पी ?" घेरे में खड़ी होकर उसने पूछा।

"दाहिना हाथ सामने करो !" आयिशा ने हुक्म दिया।

"मुझे मारोगी ?"

"बढ़ाओ !"

कुंजुपात्तुम्मा ने हाथ बढ़ाया। आयिशा ने हाथ में एक पेंसिल, एक कापी और एक 'बाल पोथी' (पहली किताब) रख दी।

"मैं आज से तुम्हारी उस्तानी हूँ।" उसने कहा।

कुंजुपात्तुम्मा हँसने लगी।

आयिशा ने कहा : "मैं चाहती हूँ कि मेरी शागिर्द कोई राज मुझसे न छिपाये। सो सब-कुछ साफ-साफ कहो। इसके बाद ही पढ़ाई शुरू होगी। मेरे भाई कहलाने वाले उन हजरत और तुम्हारे बीच क्या रिश्ता है ?"

"चुप तुट्टाप्पी !"

"बोलो, वर्ना मार खाओगी। बुद्धू को हलाल करके चार टुकड़े कर दूंगी..."

"हटो तुट्टाप्पी !"

"तो फिर कहो !"

"क्या ?"

"मेरे इक्काका के और तुम्हारे बीच क्या नाता है ?" जैसे कुंजुपात्तुम्मा के दिल को उसने छू लिया।

"चुप रहो तुट्टाप्पी !"

आयिशा थोड़ी देर चुप रही, फिर पूछा : "तुमको नाचना आता है ?"

नाच क्या बला होती है, उसे पता न था। "नहीं आता।" उसने कहा।

"कपड़ा धोना, खाना पकाना, चित्र खींचना, दाढ़ी बनाना आदि धंधा आता है ?"

"धत् तेरे की ! बताया न, कुछ नहीं आता। अब यह सब तुम ही क्यों नहीं सिखातीं ?"

"तो सुनो, मर्द जैसे परले सिरे के बुद्धू अल्लाह मियाँ की दुनिया में नहीं।"

"दुर पगली ! ऐसी बातें नहीं कही जातीं।"

इतने में कुंजुपात्तुम्मा को आयिशा का ध्यान दूसरी ओर मोड़ने का अच्छा मौका मिल गया। दो-तीन चींटियाँ मिलकर एक मरी मक्खी को घास के ऊपर से होकर खींचे लिये जा रही थीं। कुंजु-पात्तुम्मा ने कहा: "तुट्टाप्पी ! सचमुच, अभी शज्रतुल मुन्तहा का एक छोटा-सा पत्ता झड़ गया होगा।"

"बड़े संगीन मसले पर बातें कर रही हूँ। तुम लिखना-पढ़ना चाहती हो ?"

"जी हाँ।"

"ठीक, तो हर सवाल का सही-सही जवाब देना ! बोलो इक्काका के साथ तुम्हारी कब से जान पहचान हुई ?"

"मुझे तुम पढ़ाओ, तुट्टाप्पी !"

"तुम्हारी दोस्ती क्या सबसे पहले मेरे साथ नहीं हुई ?"

"नहीं तो।" कुंजुपात्तुम्मा ने कहा।

"क्या कहा ? मेरे साथ नहीं ?" आयिशा ने अचरज से पूछा।

"नहीं।"

"तो फिर ?"

"मैं तुम्हारे यहाँ के कुए के पास नहाने आया करती थी। यह बात तुम लोगों के आने से पहले की है। एक दिन मियाँ गौरैया बीवी गौरैया को मारने लगा। बीवी गौरैया नाले में गिर पड़ी। उसे देखने गई तो मैं भी नाले में फिसल गई। मेरा हाथ छिल गया। खून निकल आया। मैंने थोड़ा खून बीवी गौरैया को पिलाया। उसके पेट में दो अंडे थे। इतने में तुम्हारे इक्काका..."

"इक्काका ?"

"हाँ, वहाँ आये। नाले में उतर पड़े। मेरे हाथ पर पट्टी बाँधी। मुझे नाले के ऊपर ले आए।"

"और गौरैया का क्या हुआ ?"

"वह उड़कर अपने घर चला गया।"

'अच्छा ! अब समझी !' आयिशा ने अपने-आप कहा : 'अब समझी कि तुमने क्या जादू फेरा था...'

"क्या ?"

"कुछ नहीं।" आयिशा ने कहा: "मर्द कहलाने वाले बुद्धू..."

"चुप तुट्टाप्पी ! कैसी बातें कर रही हो !"

"अब तो आगे तुम मुझे मारने भी दौड़ोगी। मेरी किस्मत में वह भी लिखा है, ऐसा मालूम होता है। मगर दुनिया कहेगी कि तब भी आयिशा बीवी हँसमुख ही रही।"

"क्या बक रही हो, तुट्टाप्पी !"

"कुछ नहीं। अच्छा ! अब सिखाना शुरू करने वाली हूँ, होशियार !"

आयिशा ने जमीन पर 'ब' अक्षर लिखकर कहा : "देखो, इस तरह का कोई हर्फ़ उस किताब में है या नहीं।" कहकर वह घास पर चित लेट गई।

कुंजुपात्तुम्मा पुस्तक पलटकर देखने लगी। कहीं कुछ दिखाई न दिया। आखिर उसने पुस्तक की जिल्द में ही उसे ईजाद किया। आयिशा ने कहा : "उसीका नाम 'ब' है। उस हर्फ़ का नाम क्या है ?"

कुंजुपात्तुम्मा ने कहा : "ब !"

"अच्छा, अब कोई ऐसा लफ़्ज बताओ जो 'ब' से शुरू होता हो।"

"बयि !"[१]

---

१. मलयालम शब्द—सही रूप है इसका 'वषि'। अर्थ है रास्ता। अपढ़ लोग 'व' का 'ब' और 'ष' का 'य' उच्चारण करते हैं।

"अरी बुद्धू ! 'वषि' कहो।"
"वषि !"
"उसमें 'ब' आया ?"
"नहीं !"
"तो और कोई लफ़्ज कहो।"
"बयितनंङा !" (बैंगन)
"वषितनंङा कहो !"

इसी तरह कुंञुपात्तुम्मा लिखना-पढ़ना सीखने लगी। उसने दिन-रात एक कर डाला। उम्मा और बाप्पा के कानों तक उसने इसकी खबर न पहुँचने दी। उम्मा जानेगी तो आग-बबूला हो जायगी, यह उसे अच्छी तरह मालूम था। और इधर उम्मा ने पूरे जोर से 'निस्कार' करना (नमाज़ पढ़ना) फिर शुरू कर दिया था। 'निस्कार' की चटाई से वह उठती ही न थी। वहीं बैठी-बैठी घर की निगरानी करती। कुंञुपात्तुम्मा ने दिन में रसोईघर में बैठकर और रात को चटाई पर लेटकर पूरी सरगर्मी के साथ पढ़ाई जारी रखी। रोज तरह-तरह के सन्देह उसके मन में उठते और उन्हें दूर करने के लिए बीच-बीच में वह पड़ौस की ओर भाग जाती, एक तरह की अजीबो-गरीब मिठास से चमक उठती। एक दिन आयिशा की माँ ने गौरैया के बारे में उससे पूछा।

कुंञुपात्तुम्मा के कान तक लाल हो गए।

"देखा न, चेहरा कैसा लाल हो गया।" आयिशा ने कहा।

कुंञुपात्तुम्मा बेचारी को रोना आ गया। आयिशा की माँ हँसती हुई उसके सिर पर हाथ फेरने लगी।

"तुम बाल क्यों नहीं ऊँछतीं ?"

कुंञुपात्तुम्मा ने कहा : "उम्मा का कहना है कि बालों पर कंघी करने से मैं काफ़रिन बन जाऊँगी।"

आयिशा की माँ जोर से हँस पड़ी। उसने एक कंघी ली। और बीच में माँग बनाकर कुंञुपात्तुम्मा के बाल सँवारे। उसका चेहरा दमकने लगा। फिर बालों का जूड़ा बना तो आयिशा ने बेला के फूलों की माला बनाकर सिर पर बाँध दी।

"सिर पर इबलीस तो नहीं सवार हो जायगा न ?" कुंञुपात्तुम्मा ने पूछा।

"गौरैया से पूछना जाकर !"

"चलो तुट्टापी !"

कुंञुपात्तुम्मा शरमाती हुई घर आई। देखते ही उम्मा ने पूछा : "तूने यह क्या कर रखा है री हरामजादी, अपने सिर पर ?"

कुंञुपात्तुम्मा चुप रही।

उम्मा ने उठकर उसका जूड़ा जबरन खोल दिया और फूलों का हार तोड़कर फेंक दिया।

"तू उनकी नकल कभी न करना, समझी ? उस छोकरी का उप्पुप्पा (दादा) है न, वह बैलगाड़ी हाँकता था। समझी ? और तू आनामक्कार की दुलारी बेटी की दुलारी बेटी है। तेरे जो 'उप्पुप्पा' (दादा) थे न, उनके एक हाथी था, एक बड़ा-सा मस्त हाथी !"

कुंञुपात्तुम्मा ने कुछ न कहा। उसी दिन उसने और एक खबर सुनी। उसका निकाह जल्दी ही होने वाला है। बाप्पा लड़के की खोज में हैं।

वह चौंकी, उसका गला सूख गया। चेहरा फक पड़ गया। वह जहाँ-की-तहाँ गड़-सी गई।

उम्मा ने कहा : "बिना मेरी इजाज़त के तू अब घर के हाते से बाहर कदम न रखना !"

उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा गया। कान साँय-साँय करने लगे। 'या रबुल-आलमीन !' कहती हुई वह बेहोश होकर गिर पड़ी।

"मय्यद्दीने ! मुत्तुनबी ! मेरी बिटिया को यह क्या हो गया !" उम्मा रोने लगी। बाप्पा आया। पंखा किया, पानी छिड़का। कुहराम-सा मच गया।

कुंञुपात्तुम्मा ने आँखें खोलीं और उठ बैठी। वह उम्मा और बाप्पा की ओर घूरने लगी। बिना उससे पूछे उसके लिए दूल्हा चुन लिया गया है।

"बेटी ! कुंञुपात्तुम्मा !" बाप्पा ने पुकारा।

वह चुप बैठी रही।

उम्मा ने कहा : "मेरी बिटिया को यह क्या हो गया !"

कुंञुपात्तुम्मा कुछ न बोली।

"मय्यद्दीने ! कोई शैतान चढ़ आया होगा।" उम्मा ने कहा।

कुंञुपात्तुम्मा ज़ोर से हंस पड़ी, फिर वह लगातार हँसने लगी। फिर वह रो पड़ी। बिना रुके रंजीदा दिल से वह रोती रही। रात बहुत बीत गई थी। सारा संसार सो चुका था। फिर भी उसका रोना बन्द नहीं हुआ।

उसने लेटे-ही-लेटे खिड़की से बाहर देखा—क्या ये सितारे भयानक काले मकड़ी के जाल में फँसकर चमकने वाली ओस की बूँदें हैं ?

१०

ख्वाबों का ज़माना

दिन ढलता, रात आती, मगर कुंञुपात्तुम्मा ठीक-ठीक कुछ भी समझ न पाती। दिन में खाना नहीं, रात को सोना नहीं; मानो किसी ख्वाबी दुनिया में वह जी रही थी। तरह-तरह के लोग आते, तरह-तरह के सवाल उससे पूछते। वह जाग रही थी, या सो रही थी ? किसी ने उससे कुछ पूछा, शायद आयिशा ने। उसने उसके जवाब में कुछ कहा। फिर भी सवाल दुहराया गया। इस पर गमगीन दिल से चिल्लाकर उसने कहा : "तुट्टापी ! मेरा निकाह होने वाला है।"

फिर आँसू निकले, आँसुओं का दरिया। वह उसमें तैर रही थी। स्याह दुनिया के एक छोर से आग की लपटें उठ रही थीं। सूरज चढ़ता आ रहा था, मगर कौओं का 'काँव काँव' सुनाई नहीं पड़ता था। चिड़ियाँ नहीं चहक रही थीं। लोग बातचीत कर रहे थे। उम्मा और बाप्पा और किसी दूसरे शख्स की आवाज़ आ रही

थी। नहीं, यह सूरज नहीं निकल रहा था। आँगन में आग जल रही थी। उसके चारों तरफ़ छोटे-छोटे मिट्टी के चिराग़ जल रहे थे। कुंञुपात्तुम्मा को इस आग के सामने एक तख्ते पर बिठाया गया। पास ही बेंत की छड़ी लेकर एक आदमजाद बैठा था।

शैतान को भगाने वाला 'मुसलियार' था यह।

कुंञुपात्तुम्मा को अपनी ज़िन्दगी में पहली बार गुस्सा आया। गज़ब का गुस्सा! उसने चाहा कि एक हाथी की तरह चिंघाड़े, एक बाघ की भाँति दहाड़े। झपटकर सबको नोच-चीर डाले।

पर वह जैसी-की-तैसी बैठी रही। बड़ी ही भली खुशबू चारों तरफ फैल रही थी। मुसलियार चन्दन, अगर और फिर पता नहीं क्या-क्या उसके सिर के चारों तरफ घुमाकर आग में झोंक रहा था। और 'सुह! फ़ल्! हल्!' आदि मंत्र फुसफुसाकर अलाओं-बलाओं को भगा रहा था। इस मुसलियार की बेंत इफ़रीत, जिन रूहानी—जाने कितने ही शैतानों को भगाने की काफ़ी शोहरत पा चुकी थी।

उस बेंत से वह भी पिटेगी। बाल पकड़कर उसकी पीठ और जाँघों पर बेंत बरसाये जायँगे। शैतान ऐसे ही भगाये जाते हैं। इससे भी शैतान नहीं भागते तो आँखों में काली मिर्च पीस कर लगाई जायँगी। हाथों पर अंगारे रखे जायँगे तो चमड़ा 'शर' से झुलस जायगा। एड़ी से चोटी तक दर्द होने लगेगा। होने दे! उम्मा और बाप्पा ने इजाज़त दे दी है।

"बाप्पा! कहो न, मुझे न मारे।"

मुसलियार कुछ न बोला। बाप्पा भी चुप रहा, उम्मा भी।

"तुट्टाप्पी! जरा कह देना कि मुझे मारने आ रहा है।" कुंञुपात्तुम्मा ने अपने-आप कहा। वह किससे कह देने के लिए आयिशा से विनती कर रही थी?

"कौन है?" मुसलियार ने कड़ककर पूछा: "बता कौन है, जो बदन पर चढ़ आया है।"

कोई चढ़ आया होता तो शायद जवाब भी देता। क्या दरअसल कोई चढ़ आया था?

मुसलियार ने सवाल दुहराया। तीसरी बार मुसलियार नहीं, उसकी बेंत बोली। फिर क्या हुआ, कुंञुपात्तुम्मा को ठीक-ठीक याद न रहा। मुसलियार ने दस बारह बेंत लगाये। वह रो उठी, फूट-फूटकर रोई। उसने मुसलियार के हाथ से बेंत छीनकर तोड़ दी और उसे आग में झोंक दिया। उसने जी में चाहा कि कहीं भाग जाय, मगर भागी नहीं, क्योंकि आग की लपटों के घेरे में उसने निसार अहमद को खड़ा देखा।

निसार अहमद ने उसे उठा लिया था—या खुद वह निसार-अहमद के पास भाग आई थी?

निसार अहमद ने उसे उठाकर घर के अन्दर कमरे में लिटाया। फिर कुंञुपात्तुम्मा ने जब आँखें खोलीं तो दिन काफ़ी चढ़ आया था।

चटाई के पास आयिशा बैठी थी। बगल में आयिशा की माँ थी।

कुंञुपात्तुम्मा की माँ ने कोई घिसी हुई चीज लाकर उसके माथे पर लगाई। वह काफ़ी ठंडी थी। उसे अपनी साँस खूब गरम-सी लगी—आग की तरह।

बाप्पा कमरे में आया। आयिशा और उसकी माँ परे हटकर खड़ी हो गईं।

बाप्पा ने पूछा: "बेटी! 'कंजी' पियोगी?"

"कुछ नहीं चाहिए, भूख-प्यास कुछ नहीं है।"

"बिटिया मेरी! कितने दिनों से तुम फाका कर रही हो।" बाप्पा दुःख के साथ बोला।

वाह ! दुःख काहे का ? अब तो वह मरने जा रही है। आँधी चलने लगी है।...पत्ता गिरने की देरी है। लो, सचमुच आँधी उठ खड़ी हुई। पत्ते उड़ रहे हैं। पेड़ आपस में टकरा रहे हैं। अजल की आँधी हो शायद यह। दुनिया खत्म होने वाली है क्या ? क्या 'इसराफील' नाम का मलक 'सूर' नाम की तुरही बजाने वाला है ? क्या क़यामत आ पहुँची ? पेड़ उखड़ पड़ने, पहाड़ लरजकर चकनाचूर होने...धरती वीरान होने जा रही है ?

पानी बरस रहा था। मिट्टी की सोंधी-सोंधी महक हवा में तैर रही थी। सड़क के लोग हँसते हुए बातें करते चले जा रहे थे। दिन का वक़्त था। बाज़ का बोल सुनाई पड़ रहा था; हालाँकि वह आँखों के सामने दिखाई नहीं पड़ रहा था। वह पंख फैलाकर दूर आसमान पर उड़ रहा था। कमरे में न रात का अँधेरा था, और न दिन का उजाला। कुंजुपात्तुम्मा हाथ-पैर तक न हिला सकी। बदन-भर में दर्द हो रहा था, जैसे कोई उसे काट-काट कर टुकड़े-टुकड़े कर रहा हो। हजारों टुकड़े, शायद चिड़ियों को चुगाने के लिए। चिड़ियाँ उसका कन-कन चुग लेंगी, और कतार बाँधकर उड़ती हुई क्षितिज पर गायब हो जायँगी, फिर...

"कुंजुपात्तुम्मा।" कोई उसे पुकार रहा था। कौन है ? उसने आँखें खोलीं। दिल में बिजली-सी दौड़ी। निसार अहमद का बाप कमरे में खड़ा था। उसने कहा : "खिड़की क्यों बन्द करके रखी गई है ? अन्दर हवा और रोशनी काफी आनी चाहिए।"

उसने खिड़की खोल दी। हवा और रोशनी अन्दर घुस आई। वाह ! रोशनी भी कितनी रोशन होती है !

"कुंजुपात्तुम्मा !" उसने फिर पुकारा।

"जी !" कुंजुपात्तुम्मा ने कहा। मगर आवाज मुँह से बाहर आई क्या ?

निसार अहमद का बाप बाहर जाकर बाप्पा से कुछ बातें करने लगा। वह क्या कह रहा था ? नहीं, आँखें खोले इस तरह देर तक लेटा नहीं जाता। जागते रहने के बजाय सोना अच्छा है। सोना काले सागर की भाँति होता है जिसमें वह घुलती-मिलती जा रही थी। नहीं-नहीं, अब यह भी नहीं सहा जाता। रोशनी ! रोशनी चाहिए, एक सहारा ! अब उसके लिए जीना दुश्वार है। वह एक पेड़ है, धरती पर सीधा खड़ा पेड़। उसके बाल जड़ें हैं। हाथ-पैर डाल-टहनियाँ। काफी पत्ते और फूल निकल आये हैं। दो पंछी उस पर घोंसला बनाने लगे हैं। कौन हैं वे पंछी ?

"कुंजुपात्तुम्मा !" कोई उसे झकझोरकर बुला रहा था। कौन ? आवाज़ पहले कभी सुनी-सी लगती है। उसने अलसाई आँखें खोलीं। कौन है ? अरे ! यह तो निसार अहमद है न।

"कुंजुपात्तुम्मा।" निसार अहमद ने कहा : "तुम उठ बैठो और इसे चुपचाप पी लो। कड़वा तो है ही। मगर समझ लो कि बड़ा मीठा है। जायका लिए बग़ैर पी लो, बस !"

वह चाहती थी कि कह दे कि दवा-दारू नहीं चाहिए मुझे ! मगर इससे पहले ही निसार अहमद ने उसे सहारा देकर बैठा दिया और एक सफेद प्याली में कोई काली-सी चीज़ उसे पिला दी। फिर पता नहीं क्या-क्या कहता गया। कुंजुपात्तुम्मा कुछ कहना ही चाहती थी कि निसार अहमद गायब। उम्मा रवा की 'कंजी' उसे पिला रही थी।

उम्मा ने पूछा : "आयिशा की उम्मा जिस तरह बाल बाँधती है, तू भी उसी तरह बाँधेगी बेटी ?"

कुंजुपात्तुम्मा ने कहा : "मैं मरने जा रही हूँ।"

उम्मा ने कहा : "मेरी प्यारी बेटी ! ऐसी बुरी-बुरी बातें ज़बान पर न लाना। तेरी शादी पक्की हो गई है।"

कुंजुपात्तुम्मा ने कहा : "मेरी शादी मत कराओ। मैं मर जाऊँगी।"

"मौत हो जायगी कहो।" कहती हुई आयिशा कमरे में आकर हँसने लगी। पूछा : "दवा मीठी थी क्या ?"

"हटो तुट्टाप्पी !"

वह वैसे ही पड़ी रही। उसके दिल में शहद था। अंग-अंग से मिठास छलक रही थी। उसे भूख-प्यास लगने लगी। खाने-पीने की इच्छा होने लगी। उठकर बैठने के लिए किसी के सहारा देने की अब जरूरत न थी। वह धीरे-धीरे चल-फिर सकती थी। ऐसी हालत में एक दिन आयिशा ने पूछा : "अरी बुद्धू ! कुछ पता भी है कि तेरी शादी किसके साथ पक्की हुई है ?"

"चुप तुट्टाप्पी !"

"बता तो सही, कौन है वह ?"

११

नई पीढ़ी बोल रही है

एक दिन रात के वक्त कुंजुपात्तुम्मा के साथ निसार अहमद की शादी हो गई। उस दिन शाम को करीब चार बजे एक मजेदार वाक़या हुआ।

खतीब को निकाह कराने का न्यौता देने के लिए बाप्पा मस-जिद गये हुए थे। गाँव के सभी घर वालों को निकाह की इत्तिला तो दे दी गई थी, मगर किसी को न्यौता नहीं दिया गया था। न दावत का इन्तज़ाम था, न कोई धूम-धाम। निसार अहमद के माँ-बाप ने कहा कि इसकी कोई ज़रूरत नहीं। सात-आठ लोगों के लिए 'नेय चोर' (घी वाला भात) तैयार किया गया था और दुलहिन के लिए कपड़े वग़ैरा उन लोगों ने ही खरीद लिये थे। वे कपड़े किस ढंग के हैं, खुद कुंजुपात्तुम्मा को भी पता न था। कुंजुपात्तुम्मा से कहा गया था कि वह नहा-धो ले। स्नान हो गया तो आयिशा उसे अपने घर ले गई।

जो कुंजुपात्तुम्मा नहाने के बाद आयिशा के घर गई थी, वापस आते समय वह बिलकुल बदल गई थी। उसने घाघरा पहन रखा था। बाडीस के ऊपर ब्लाउज़ ! ऊपर हरी साड़ी। बाल सँवारकर बाँधे गए थे, जिन पर फूलों की माला गुँथी थी। साड़ी के पल्ले से सिर ढका था। पैरों पर जूते थे। एक सौ बार कमरे में मटरगश्ती कराकर जूता पहनकर चलने का ढंग सिखाने के बाद ही उसे घर जाने दिया गया था।

निसार अहमद ने कहा था : "झुको नहीं, सीधी तनकर धीरज के साथ चलती जाओ !"

कुंजुपात्तुम्मा इसी तरह घर वापस आई।

वह सिर से पैर तक दमक रही थी। उसकी काली खाल चमक उठी। वह अजीबो-गरीब नज़ारा देखने के लिए रास्ते में बहुत-से लड़के इकट्ठे हो गए थे। उम्मा घर के आँगन में खड़ाऊँ पर सवार खड़ी थी। उसने देखा कि कुछ हल्ला-गुल्ला-सा हो रहा है। तरह-तरह की बातें हो रही थीं। कुछ साफ़-साफ़ सुनाई नहीं पड़ रहा था।

उम्मा ने लड़कों से पूछा : "अरे, क्या बात है बदमाशो ?"

गाँव के उन बदमाश कुंजुपात्तुम्माओं, कुंजुताच्चुम्माओं, अटिमाओं और मक्कारों ने कहा : "कुडु कुडु[1] !"

उम्मा बौखला उठी : "लौंडो ! क्या बक रहे हो ?"

उन लौंडों ने कहा : "लुल्लुलु[2] !"

उम्मा पर गुस्से का भूत सवार हो गया। वह गुर्राई : "कमबख्तो ! तुम लोगों को काला साँप सूँघ जाय।"

"मेम्मेमे !"

१. हँसी उड़ाने के लिए गला बिगाड़कर बनाई जाने वाली आवाज़।

२. मजाक उड़ाने के लिए बनाई जाने वाली आवाज़।

"सुअर !" उम्मा गरज उठी।

"पेप्पेपे !!"

उम्मा ने धमकी दी : "मैं मूसल से पीस डालूँगी सबको।"

कुंजुपात्तुम्मा दूर से बोली :

"उम्मा ! चुप भी रहो न ! उनसे कुछ बोलोगी तो उनके माँ-बाप नाहक झगड़ा खड़ा करने आयेंगे।"

"आने दो," उम्मा इतने ज़ोर से बोल रही थी कि सारा गाँव सुन सकता था : "वे सब आकर तुझे देख लें जरा ! आनामक्कार की लाड़ली बेटी की लाड़ली बेटी को एक बार आँख भरकर देख लें सब ! तेरे दादा जो थे, उनके एक हाथी (आना) था, एक बड़ा-सा मस्त हाथी (आना) !"

"वह कुषियाना था—" अंगुइत जितना छोटा अटिमा नाम का लड़का, जिसकी नाक से नजला बह रहा था, फोड़े-फुंसियों से हाथ भर गये थे और रंग कोयले की तरह काला था, बोला—"कुषियाना ! कुषियाना !"[1]

अब कुंजुताच्चुम्मा से न रहा गया। कहते हैं कि बीर बहादुर आनामक्कार (हाथी वाला मक्कार) साहब का, चार काफ़िरों का काम तमाम करने वाला बड़ा-सा असली मस्त हाथी (आना) आँगन में या दीवारों के पाये पर रेत में गोल-गोल खाइयों के नीचे घँसकर पड़े काले-भूरे खटमलों की तरह मामूली कीड़ा (कुषियाना) था !

१. खटमलनुमा भूरे रंग का एक कीड़ा है कुषियाना, जिसका शाब्दिक अर्थ है कुषि=गड्ढा, आना=हाथी—गड्ढे में रहने वाला हाथी। अक्सर हाथी को जंगल में गड्ढा खोदकर उसमें गिराते हैं और बाद में काबू में लाते हैं। इसलिए इस कीड़े और हाथी में शब्द साम्य है। यह कीड़ा हमेशा पीछे की ओर चलता है। रेतीली ज़मीन पर छोटी खाई बनाता है, उसके नीचे छिपकर रहता है, छोटे कीड़े

"या अल्लाह !" कुंजुताच्चुम्मा छाती पीटती हुई बोली : "इन कलमुँहों के सिर चटनी कर दे !"

अजीब बात है कि उन कलमुँहों के सिर चटनी नहीं बने। उन पर बिजली नहीं गिरी। ऐसी कोई वारदात नहीं हुई। वे सब एक साथ चिल्ला उठे : "आनामक्कार का बड़ा आना (हाथी) कुषियाना था, कुषियाना !"

कुंजुताच्चुम्मा का सिर चकराया। दम घुटने लगा। क्षण-भर में सारी जिन्दगी आँखों के सामने से घूम गई। दोनों हाथों से सिर थामकर वह ज़मीन पर बैठ गई।

कुंजुपात्तुम्मा ने पास आकर छोकरों से पूछा : "क्या है, लड़को ?"

छोकरों ने कहा : "जुकु जुकु !"

"क्या ?"

"पेप्पेपे !"

"क्या है रे !"

लड़कों ने कहा : "कुषियाना ! कुषियाना !"

"कौन-सा कुषियाना !" कुंजुपात्तुम्मा की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। सोचा, किसी लड़के ने 'कुषियाना' को पकड़कर उम्मा के कान में डाल दिया होगा।

उसने उम्मा के पास बैठकर पूछा : "क्या है उम्मा ?"

फिसलकर उसमें गिरते हैं तो उन्हें पकड़कर खा लेता है। निकलने की चेष्टा करते हैं तो रेत उछाल-उछालकर उन्हें नीचे गिरा लेता है। यह कीड़ा भी केरल में 'आना' (हाथी) कहलाता है। मगर असली हाथी से अलग पहचानने के लिए 'कुषि' (खाई) जोड़कर इसे 'कुषियाना' कहते हैं। अक्सर दोनों प्राणियों के नामों की समानता को लेकर चुटकुले बनाये जाते हैं।

उम्मा ने कुछ न कहा। और कहा भी क्या जा सकता था ? सारी रंगीन दुनिया मिट्टी के घरौंदे की तरह तहस-नहस होकर सामने पड़ी है। अब जीने का फायदा ही क्या था ?

कुंजुपात्तुम्मा ने फिर सवाल दुहराया। उम्मा ने आँसू बहाते हुए भरे गले से कहा : "तेरे दादा के वह बड़ा-सा मस्त 'आना' (हाथी) था न, वह 'कुषियाना' था ! 'कुषियाना' !"